वीर ज्ञानोदय ग्रन्थमाला का पुष्प नं. 448
ISBN-978-93-84003-57-9

श्री गणधरवलय मंत्र स्तोत्र संग्रह

श्री गौतम गणधर स्वामी प्रणीत मूलमंत्र

**(श्री सकलकीर्ति–शुभचंद्र–पद्मनंदि–प्रभाचन्द्र-
जिनसेनाचार्यादि द्वारा रचित संस्कृत स्तोत्र)**

–संकलन एवं रचना –

**जैन समाज की सर्वोच्च साध्वी, परमपूज्य गणिनीप्रमुख आर्यिकाशिरोमणि
श्री ज्ञानमती माताजी**

पूज्य गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी द्वारा घोषित ''श्री गौतम गणधर वर्ष''
(2014–15) के अन्तर्गत जम्बूद्वीप के पीठाधीश स्वस्ति श्री रवीन्द्रकीर्ति स्वामी
के पीठाधीश पदारोहण दिवस के अवसर पर प्रकाशित
मगशिर कृष्णा दशमी, 17 नवम्बर 2014

-प्रकाशक-

दिगम्बर जैन त्रिलोक शोध संस्थान
जम्बूद्वीप-हस्तिनापुर (मेरठ) उ.प्र.फोन नं.- (01233) 280184, 280994
Website : www.jambudweep.org www.encyclopediaofjainism.com
E-mail : jambudweeptirth@gmail.com
Facebook : jaintirthjambudweep

प्रथम संस्करण	मगशिर कृ. दशमी, वीर नि. सं. 2541	मूल्य
1100 प्रतियाँ	17 नवम्बर 2014	24/-रु.

दिगम्बर जैन त्रिलोक शोध संस्थान द्वारा संचालित

वीर ज्ञानोदय ग्रन्थमाला

इस ग्रन्थमाला में दिगम्बर जैन आर्षमार्ग का पोषण करने वाले हिन्दी, संस्कृत, प्राकृत, कन्नड़, अंग्रेजी, गुजराती, मराठी आदि भाषाओं के न्याय, सिद्धान्त, अध्यात्म, भूगोल-खगोल, व्याकरण आदि विषयों पर लघु एवं वृहद् ग्रंथों का मूल एवं अनुवाद सहित प्रकाशन होता है। समय-समय पर धार्मिक लोकोपयोगी लघु पुस्तिकाएँ भी प्रकाशित होती रहती हैं।

–: संस्थापिका एवं प्रेरणास्रोत :–

परमपूज्य गणिनीप्रमुख आर्यिकाशिरोमणि श्री ज्ञानमती माताजी
(दो बार डी.लिट्. की मानद उपाधि से अलंकृत)

–: मार्गदर्शन :–

प्रज्ञाश्रमणी आर्यिका श्री चन्दनामती माताजी
(पीएच.डी. की मानद उपाधि से अलंकृत)

–: निर्देशक एवं सम्पादक:–

कर्मयोगी पीठाधीश स्वस्तिश्री रवीन्द्रकीर्ति स्वामीजी

–: प्रबंध सम्पादक :–

जीवन प्रकाश जैन

सर्वाधिकार प्रकाशकाधीन

कम्पोजिंग - ज्ञानमती नेटवर्क
जम्बूद्वीप-हस्तिनापुर (मेरठ) उ.प्र.

सम्पादकीय

-पीठाधीश स्वस्ति श्री रवीन्द्रकीर्ति स्वामी

मंगलं भगवान वीरो, मंगलं गौतमो गणी।
मंगलं कुंदकुंदाद्यौ, जैनधर्मोऽस्तु मंगलम्।।

भगवान महावीर स्वामी हम सभी का मंगल करें। श्री गौतम गणधर स्वामी हम सभी का मंगल करें। श्री कुंदकुंद आदि पूर्वाचार्य हम सभी का मंगल करें और जैनधर्म हम सभी के लिए मंगलकारी होवे।

इस एक मंगलाचरण में श्री महावीर स्वामी से लेकर परम्परागत सभी पूर्वाचार्यों की स्तुति की गई है। आज हम सभी का परम सौभाग्य है कि हमें भगवान महावीर की साक्षात् वाणी को पढ़ने-सुनने का सौभाग्य प्राप्त हो रहा है। तीर्थंकर की परम्परा, गणधर की परम्परा, चतुर्विध संघ-मुनि-आर्यिका, क्षुल्लक-क्षुल्लिका (श्रावक-श्राविका) की परम्परा अनादि है। यह अनादि काल से चली आ रही है और अनंतकाल तक चलती रहेगी।

वर्तमान में बीसवीं शताब्दी में परम पूज्य गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी का हम सभी पर परम उपकार हैं, जो कि हमें नित्य नई-नई बातों से, प्राचीन रहस्यों से अवगत कराती हैं। इनके जीवन का हरपल नई-नई कृतियों को, नई-नई रचनाओं को लिए रहता है। जिनकी लेखनी में, वाणी में सरस्वती का वास है तभी तो षट्खण्डागम सूत्र ग्रंथ की 16 पुस्तकों पर संस्कृत टीका लिखकर जैनसमाज को एक महान कृति प्रदान की है। अष्टसहस्री जैसे क्लिष्ट ग्रंथ का हिन्दी अनुवाद किया है। 400 ग्रंथों की रचना की है। जिनमें अभी कई ग्रंथ अप्रकाशित हैं। आज सारे विश्व में जिनके द्वारा रचित इन्द्रध्वज, कल्पद्रुम, सर्वतोभद्र आदि विधानों की धूम मची है। जिन्होंने चारों अनुयोगों का तलस्पर्शी ज्ञान प्राप्त करके जैन भूगोल-जम्बूद्वीप, तेरहद्वीप एवं तीनलोक की रचना को हस्तिनापुर की धरती पर साकार किया है।

प्रस्तुत पुस्तक 'श्री गणधरवलय मंत्र स्तोत्र संग्रह' एक बहुत ही महत्त्वपूर्ण कृति है, क्योंकि श्री गणधरवलय मंत्र का प्रतिदिन पाठ करने से आधि-व्याधि दूर होती है, शरीर निरोग एवं स्वस्थ होता है और जिसमें गणधरवलय मंत्र पर अनेक आचार्यों के स्तोत्र एवं सर्व गणधर देव वन्दना एवं श्री गौतमस्वामी का स्तोत्र आदि पाठ हैं वह पुस्तक चमत्कारी एवं अतिशयकारी है।

इस पुस्तक से प्रतिदिन एक-एक स्तोत्र का पाठकर सभी भव्यजीव अपने मानव पर्याय को सफल करें और परम्परा से एक दिन शिवपद को प्राप्त करें यही मंगल भावना है। वीर ज्ञानोदय ग्रंथमाला दिन दूनी रात चौगुनी वृद्धि करे, जिनेन्द्रदेव से यही मंगल प्रार्थना है।

प्रस्तावना

—प्रज्ञाश्रमणी आर्यिका चन्दनामती

अड़तालिस गणधरवलय, मंत्र नमूँ तिहुँकाल।
श्री गणेश गुरुदेव को, नमूँ नमूँ नतभाल।।

वर्तमान काल के चौबीसवें तीर्थंकर भगवान महावीर स्वामी के प्रथम गणधर श्री गौतम स्वामी हुए हैं। जिन्होंने भगवान महावीर स्वामी के समवसरण में उनके चरण सानिध्य में रहकर ऋद्धी मंत्रों को बनाया है। ये 48 गणधरवलय मंत्र ऋद्धि मंत्र, मंगलमंत्र कहे जाते हैं। जिनका प्रतिदिन पाठ करने से सभी विघ्न बाधाएँ दूर हो जाती हैं।

इन 48 गणधरवलय मंत्र पर अनेक आचार्यों ने स्तुति बनाई है जिनका संकलन जैन समाज की सर्वोच्च साध्वी परमपूज्य गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी ने इस 'गणधरवलय मंत्र स्तोत्र संग्रह' पुस्तक में किया है। पूज्य माताजी ने स्वयं भी 48 मंत्रों का पद्यानुवाद किया है और एक-एक मंत्र का अर्थ करते हुए हिन्दी पद्य में 42 काव्यों में गणधरवलय मंत्र स्तुति की सुन्दर रचना की है। जैसे एक मंत्र का काव्य देखिए—

'णमो अणंतोहिजिणाणं' है अनंत अवधि जिनकी।
ऐसे अनंत अवधिधारी जिनवर केवलज्ञानी ही।।
अंतरहित-मर्याद रहित ज्ञानी सब ऋद्धि विभूषित हैं।
अंतातीत ज्ञान सुख हेतु नितप्रति उनको वंदूँ मैं।।3।।

इस श्री गणधरवलय मंत्र स्तोत्र संग्रह में सर्वप्रथम श्री गौतमस्वामी प्रणीत गणधरवलय मंत्र है फिर उसका पद्यानुवाद है। इसके बाद श्री सकलकीर्ति आचार्यकृत गणधरवलय स्तोत्र और उसका पद्यानुवाद पूज्य गणिनी ज्ञानमती माताजी द्वारा किया हुआ है। पुनः पूज्य माताजी द्वारा रचित हिन्दी पद्य में गणधरवलय मंत्र स्तुति है। इसके बाद संस्कृत में श्री शुभचन्द्राचार्य, श्री पद्मनंद्याचार्य, श्री प्रभाचन्द्राचार्य कृत एवं श्री मट्टिमडि-भट्टोपाध्यायकृत गणधरवलय पूजा संग्रह से संकलित गणधरवलय स्तुति है। फिर प्रतिष्ठातिलक से श्री गणधरदेव एवं सप्तविध मुनि स्तुति एवं अड़तालिस पूजा मंत्रों को दिया है।

पुनः पूज्य माताजी द्वारा रचित संस्कृत में अनुष्टुप् छंद में 41 श्लोकों में गणधरवलय स्तुति है जो कि अत्यन्त सरल संस्कृत भाषा में है जैसे कि-

जिनेभ्यः सर्वसिद्धेभ्यः, नमो देशजिनाश्च ये।
सूरिपाठकयोगीन्द्रा-स्तेभ्योऽपि सततं नमः।।

इसके बाद श्री जिनसेनाचार्य विरचित आदिपुराण ग्रंथ से श्री गौतमस्वामी स्तोत्र 30 श्लोकों में अर्थ सहित बहुत ही सुन्दर है। जिसे पढ़कर श्री गौतमस्वामी के ज्ञान की महिमा का परिज्ञान होता है। इस स्तोत्र के बाद पूज्य माताजी द्वारा रचित अनुष्टुप् छंद

में 8 श्लोकों में श्री गौतमस्वामी की स्तुति है। पुनः श्री गौतमस्वामी स्तोत्र है।

इसके बाद श्री ऋषभदेव के चौरासी गणधर देव की, चौबीस तीर्थंकर के 1459 गणधर देव की, श्री महावीर स्वामी के 11 गणधर देव की हिन्दी पद्य में स्तुति एवं श्री गणधरदेव वन्दना पूज्य माताजी द्वारा रचित है।

इसके बाद 48 गणधरवलय मंत्र सहित स्तोत्र एवं गणधरवलय मंत्र महिमा पूज्य माताजी द्वारा बहुत ही सुन्दर तर्ज में रचित है जिसे पढ़कर मन आनंदित हो जाता है—

आओ हम सब करें वन्दना, गणधर देव प्रधान की।
जिनवर दिव्यध्वनी को झेलें, द्वादशांग श्रुतवान की।।
वंदे गणधरम्–4
अड़तालिस ऋद्धी को धारें, द्वादश गण के ईश्वर हैं।
यंत्ररूप हैं मंत्ररूप हैं, तंत्ररूप भी परिणत हैं।
ऐसे गुरु को वन्दन करते, मिले राह कल्याण की।। आवो.....।

स्तोत्र के अन्त में पूज्य माताजी ने श्री गणधरवलय मंत्र स्तोत्र की प्रशस्ति दी है। वीर नि. सं. 2540 हस्तिनापुर में पूज्य माताजी ने पौष शुक्ला पूर्णिमा को यह श्री गणधरवलय स्तोत्र का संकलन एवं रचना करके पूर्ण किया है। इस मंत्र स्तोत्र को पढ़ने वाले सभी भव्य जीवों के रोग, शोक दूर होएंगे। धन–धान्य की वृद्धि एवं उत्तम कीर्ति एवं शांति की प्राप्ति होगी, ऐसी मंगल भावना भाई है—

भाक्तिक जन इस मंत्र स्तोत्र, को पढ़कर रोग शोक नाशे।
धन धान्य वृद्धि उत्तम कीर्ती, पा निज में ज्ञानज्योति भासें।।
जब तक जग में जिनवर शासन, जिनधर्म अहिंसामय जब तक।
तब तक इस जग में यह स्तोत्र, भव्यों को होवे शांतीप्रद।।

प्रशस्ति के बाद मेरे द्वारा रचित श्री गौतमस्वामी चालीसा, भजन एवं गीत है। पूज्य माताजी ने वीर नि. सं. 2540 श्रावण कृष्णा एकम् श्री गौतमस्वामी के 2571 वें 'गणधर दिवस' के शुभ अवसर पर 'गणधर वर्ष' की घोषणा करते हुए पूरे वर्ष भर श्री गौतमस्वामी का गुणगान करने की प्रेरणा प्रदान की है। श्री गौतमस्वामी की अमूल्य कृतियाँ चैत्यभक्ति, गणधर– वलय मंत्र, दैवसिक, पाक्षिक एवं श्रावक प्रतिक्रमण हैं जिनका वर्तमान में सभी साधु– साध्वियाँ, व्रती श्रावक प्रतिदिन पाठ करते हैं। जिनका एक–एक शब्द अनंत–अनंत अर्थ से सहित है। ऐसे श्री गौतमस्वामी को कोटि–कोटि नमन करते हुए, पूज्य गणिनी ज्ञानमती माताजी को बारम्बार नमन करते हैं जिनकी कृपा प्रसाद से हमें श्री गौतमस्वामी की अनुपम निधि, अमूल्य ज्ञान को प्राप्त करने का शुभ अवसर मिल रहा है।

यह 'श्री गणधरवलय मंत्र स्तोत्र संग्रह' सभी के लिए मंगलकारी हो, यही मंगल भावना है।

दो शब्द

–आर्यिका सुव्रतमती (संघस्थ)

मंगलं स्यान्महावीरो, श्री गौतमश्च मंगलम्।
जिन शासनमाचंद्रं, स्थेयात् कुर्याच्च मंगलम्।।

भगवान महावीर के शासनकाल में बीसवीं सदी में मुनि परम्परा को जीवन्त करने वाले युगप्रवर्तक चारित्रचक्रवर्ती प्रथमाचार्य श्री शांतिसागर जी महाराज हुए हैं। उनके 3 बार दर्शन करने वाली एवं उनसे अनुभव ज्ञान प्राप्त करने वाली और उनके प्रथम पट्टशिष्य चारित्र चूड़ामणि आचार्य श्री वीरसागर जी महाराज के कर कमलों से आर्यिका दीक्षा को प्राप्त करने वाली, जैन समाज की सर्वोच्च साध्वी, वर्तमान में पीछीधारी सभी साधुओं में सबसे प्राचीन दीक्षित, परम पूज्य 105 गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी हैं, जिन्होंने जिनधर्म, जिनागम की विशेष प्रभावना की है। प्रतिक्षण पूज्य माताजी की यह भावना रहती है कि किस तरह से मैं वर्तमान में सभी भव्य जीवों को आगम के ज्ञान से, पूर्वाचार्यों की वाणी से सिंचित करूँ।

सच्चे ज्ञान की प्राप्ति धर्म गुरुओं से सहज ही हो जाती है जैसा कि श्री पूज्यपाद स्वामी ने इष्टोपदेश में कहा है–

अज्ञानोपास्तिरज्ञानं, ज्ञानं ज्ञानि समाश्रयः।
ददाति यत्तु यस्यास्ति, सुप्रसिद्धमिदं वचः।।

अर्थात् अज्ञानी की उपासना–संगति से प्राणी अज्ञान प्राप्त करता है तथा ज्ञानी की उपासना से ज्ञान प्राप्त करता है, क्योंकि 'जिसके पास जो कुछ है वह वही वस्तु प्रदान करता है' यह सुप्रसिद्ध वचन है।

किसी भी शास्त्र को पढ़ते समय यदि अर्थ समझ में नहीं आता है तो पूज्य माताजी कहती हैं कि मेरे गुरू आचार्य श्री वीरसागर जी महाराज कहा करते थे–

'पठितव्यं खलु पठितव्यं अग्रे अग्रे स्पष्टं भविष्यति' अर्थात् हमेशा पढ़ते रहो–पढ़ते रहो, आगे-आगे विषय स्पष्ट होगा। जैसे श्रावक की दैनिक षट् क्रियाओं में स्वाध्याय एक क्रिया है, उसी प्रकार मुनियों के 6 अंतरंग तपों में स्वाध्याय नाम का एक तप है। कहा भी है-**'स्वाध्यायः परमं तपः।'**

इस पुस्तक की रचना करके पूज्य माताजी ने जैन समाज पर महान उपकार किया है। भगवान महावीर की साक्षात् दिव्यध्वनि को सुनकर अन्तर्मुहूर्त में द्वादशांग की रचना करने वाले श्री गौतमस्वामी के मुख से निकले हुए श्री गणधरवलय मंत्र एवं स्तोत्र आदि को पढ़कर उसे हृदयंगम कर हम अपने सम्यग्दर्शन को शुद्ध करें और परम्परा से एक दिन मोक्ष पद को प्राप्त करें, इन्हीं मंगल भावनाओं के साथ पूज्य माताजी के पावन चरणों में कोटिशः नमन।

परमपूज्य गणिनीप्रमुख आर्यिकाशिरोमणि
श्री ज्ञानमती माताजी का संक्षिप्त-परिचय

–प्रज्ञाश्रमणी आर्यिका चन्दनामती

जन्मस्थान– टिकैतनगर (बाराबंकी) उ.प्र.

जन्मतिथि– आसोज सुदी 15 (शरदपूर्णिमा) वि. सं. 1991, (22 अक्टूबर सन् 1934)

जाति– अग्रवाल दि. जैन, **गोत्र–** गोयल, **नाम–** कु. मैना

माता-पिता– श्रीमती मोहिनी देवी एवं श्री छोटेलाल जैन

आजन्म ब्रह्मचर्य व्रत– ई. सन् 1952, बाराबंकी में शरदपूर्णिमा के दिन

क्षुल्लिका दीक्षा– चैत्र कृ. 1, ई. सन् 1953 को महावीरजी अतिशय क्षेत्र (राज.) में आचार्यरत्न श्री देशभूषण जी महाराज से। नाम – क्षुल्लिका वीरमती

आर्यिका दीक्षा– वैशाख कृ. 2, ई. सन् 1956 को माधोराजपुरा (राज.) में चारित्रचक्रवर्ती 108 आचार्य श्री शांतिसागर जी की परम्परा के प्रथम पट्टाधीश आचार्य श्री वीरसागर जी महाराज के करकमलों से।

साहित्यिक कृतित्व– अष्टसहस्री, समयसार, नियमसार, मूलाचार, कातंत्र-व्याकरण, षट्खण्डागम आदि ग्रंथों के अनुवाद/टीकाएं एवं लगभग 300 ग्रंथों की लेखिका।

डी.लिट्. की मानद उपाधि– सन् 1995 में अवध वि.वि. (फैजाबाद) द्वारा एवं तीर्थंकर महावीर विश्वविद्यालय मुरादाबाद द्वारा 8 अप्रैल 2012 को ''डी.लिट्.'' की मानद उपाधि से विभूषित।

तीर्थ निर्माण प्रेरणा– हस्तिनापुर में जंबूद्वीप, तेरहद्वीप, तीनलोक आदि रचनाओं के निर्माण, शाश्वत तीर्थ अयोध्या का विकास एवं जीर्णोद्धार, प्रयाग-इलाहाबाद (उ.प्र.) में तीर्थंकर ऋषभदेव तपस्थली तीर्थ का निर्माण, तीर्थंकर जन्मभूमियों का विकास यथा – भगवान महावीर जन्मभूमि कुण्डलपुर (नालंदा-बिहार) में 'नंद्यावर्त महल' नामक तीर्थ निर्माण, भगवान पुष्पदंतनाथ की जन्मभूमि काकन्दी तीर्थ (निकट गोरखपुर-उ.प्र.) का विकास, भगवान पार्श्वनाथ केवलज्ञानभूमि अहिच्छत्र तीर्थ पर तीस चौबीसी मंदिर, हस्तिनापुर में जम्बूद्वीप स्थल पर भगवान शांतिनाथ-कुंथुनाथ-अरहनाथ की 31-31 फुट उत्तुंग खड्गासन प्रतिमा, मांगीतुंगी में निर्माणाधीन 108 फुट उत्तुंग भगवान ऋषभदेव की विशाल प्रतिमा, महावीर जी तीर्थ पर महावीर धाम में पंचबालयति मंदिर, शिर्डी में ज्ञानतीर्थ इत्यादि।

महोत्सव प्रेरणा– पंचवर्षीय जम्बूद्वीप महामहोत्सव, भगवान ऋषभदेव अंतर्राष्ट्रीय निर्वाण महामहोत्सव, अयोध्या में भगवान ऋषभदेव महाकुंभ मस्तकाभिषेक, कुण्डलपुर महोत्सव, भगवान पार्श्वनाथ जन्मकल्याणक तृतीय सहस्राब्दि महोत्सव, दिल्ली में कल्पद्रुम महामण्डल विधान का ऐतिहासिक आयोजन इत्यादि। **विशेषरूप से 21 दिसम्बर 2008 को जम्बूद्वीप स्थल पर विश्वशांति अहिंसा सम्मेलन का आयोजन हुआ, जिसका उद्घाटन भारत की तत्कालीन राष्ट्रपति श्रीमती प्रतिभा देवीसिंह पाटील द्वारा किया गया।**

शैक्षणिक प्रेरणा– 'जैन गणित और त्रिलोक विज्ञान' पर अंतर्राष्ट्रीय संगोष्ठी, राष्ट्रीय कुलपति सम्मेलन, इतिहासकार सम्मेलन, न्यायाधीश सम्मेलन एवं अन्य अनेक राष्ट्रीय-अंतर्राष्ट्रीय स्तर के सेमिनार आदि।

रथ प्रवर्तन प्रेरणा– जम्बूद्वीप ज्ञानज्योति (1982 से 1985), समवसरण श्रीविहार (1998 से 2002), महावीर ज्योति (2003-2004) का भारत भ्रमण।

इस प्रकार नित्य नूतन भावनाओं की जननी पूज्य माताजी चिरकाल तक इस वसुधा को सुशोभित करती रहें, यही मंगल कामना है।

विषयानुक्रमणिका

	विषय	पृष्ठ संख्या
1.	गणधरवलय मंत्र–श्री गौतम गणधर स्वामी विरचित	1
2.	गणधरवलय मंत्र–पद्यानुवाद गणिनी ज्ञानमती	2
3.	गणधरवलय स्तोत्र–श्री सकलकीर्ति आचार्यकृत	4
4.	गणधरवलय स्तुति–पद्यानुवाद-गणिनी ज्ञानमती	5
5.	गणधरवलय मंत्र स्तुति–हिन्दी पद्य-गणिनी ज्ञानमती विरचित	7
6.	श्री गणधरवलय स्तुति–श्री शुभचन्द्राचार्य कृत	14
7.	श्री गणधरवलय स्तुति–श्री पद्मनंदि–आचार्यकृत	16
8.	श्री गणधरवलय स्तुति–श्री प्रभाचंद्राचार्यकृत	18
9.	श्री गणधरवलय स्तुति–श्री मट्टिमडि-भट्टोपाध्यायकृत	22
10.	श्री गणधरदेव एवं सप्तविध मुनि स्तुति (प्रतिष्ठातिलक से)	24
11.	अड़तालिस पूजा मंत्र (प्रतिष्ठातिलक से)	25
12.	गणधरवलय स्तुतिः–गणिनी ज्ञानमती	27
13.	श्री गौतमस्वामी स्तोत्र (श्री जिनसेनाचार्य विरचित)	31
14.	श्री गौतमस्वामी स्तोत्र (गणिनी ज्ञानमती विरचित)	38
15.	श्री गौतम स्वामी स्तोत्र (अज्ञात कवि विरचित)	39
16.	श्री गणधरदेव स्तोत्र–गणिनी ज्ञानमती (श्री ऋषभदेव के चौरासी गणधर देव स्तोत्र)	40
17.	श्री गणधरदेव स्तोत्र–गणिनी ज्ञानमती (चौबीस तीर्थंकर के 1459 गणधर देव स्तोत्र)	53
18.	महावीर स्वामी के 11 गणधर देव स्तोत्र	56
19.	श्री गणधरदेव वंदना–गणिनी ज्ञानमती	58
20.	गणधरवलय मंत्र स्तोत्र–गणिनी ज्ञानमती	60
21.	गणधरवलय मंत्र महिमा–गणिनी ज्ञानमती	80
22.	प्रशस्ति	82
23.	श्री गौतमस्वामी चालीसा	83
24.	भजन–गौतम गणधर की वाणी सुनो.....	86
25.	गीत–गौतम गणधरवाणी है द्वादशांग का सार.....	87
26.	भजन–जन्म मानव का पाया है जो.....	88

गणधरवलय मंत्र

(श्री गौतम गणधर स्वामी रचित)

णमो जिणाणं, णमो ओहिजिणाणं, णमो परमोहिजिणाणं, णमो सव्वोहिजिणाणं, णमो अणंतोहिजिणाणं, णमो कोट्ठ-बुद्धीणं, णमो बीजबुद्धीणं, णमो पादाणुसारीणं, णमो संभिण्णसोदाराणं, णमो सयंबुद्धाणं, णमो पत्तेयबुद्धाणं, णमो बोहियबुद्धाणं, णमो उजुमदीणं, णमो विउलमदीणं, णमो दसपुव्वीणं, णमो चउदसपुव्वीणं, णमो अट्ठंग-महा-णिमित्त-कुसलाणं, णमो विउव्व[1]-इड्ढि-पत्ताणं, णमो विज्जाहराणं, णमो चारणाणं, णमो पण्णसमणाणं[2], णमो आगास-गामीणं, णमो आसीविसाणं, णमो दिट्ठिविसाणं, णमो उग्गतवाणं, णमो दित्ततवाणं, णमो तत्ततवाणं, णमो महातवाणं, णमो घोरतवाणं, णमो घोरगुणाणं, णमो घोर-परक्कमाणं, णमो घोरगुण-बंभयारीणं[3], णमो आमोसहि-पत्ताणं, णमो खेल्लोसहिपत्ताणं, णमो जल्लोसहिपत्ताणं, णमो विप्पोसहिपत्ताणं, णमो सव्वोसहिपत्ताणं, णमो मणबलीणं, णमो वचिबलीणं, णमो कायबलीणं, णमो खीरसवीणं, णमो सप्पिसवीणं, णमो महुरसवीणं, णमो अमियसवीणं[4], णमो अक्खीण-महाणसाणं, णमो वड्ढमाणाणं, णमो सिद्धायदणाणं, णमो भयवदो महदि महावीर-वड्ढमाण-बुद्धरिसीणो[5] चेदि।

जस्संतियं धम्मपहं णियच्छे[6] तस्संतियं वेणइयं पउंजे।
काएण वाचा मणसावि णिच्चं, सक्कारए तं सिर-पंचमेण।।1।।

१. विउण्वणइड्ढिपत्ताणं इति पाठः। २. पण्णासमणाणं इति पाठः। ३. घोरगुणबंभचारीणं इति पाठः। ४. अमयसवीणं इति पाठः। ५. रिसिणो इति पाठः। ६. णिगच्छे इति पाठः, ग्रंथत्रयीषु।

गणधरवलय मंत्र

(पद्यानुवाद-गणिनी ज्ञानमती)

–शंभु छंद –

मैं नमूं जिनों[1] को जो अर्हन् अवधीजिन[2] मुनि को नमूं नमूं।
परमावधिजिन को नमूँ तथा, सर्वावधि जिन को नमूं नमूं।।
मैं नमूं अनंतावधिजिन[3] को, अरु कोष्ठबुद्धियुत साधु नमूं।
मैं नमूं बीजबुद्धीयुतमुनि, पादानुसारियुत साधु नमूं।।1।।

संभिन्नश्रोतृयुत साधु नमूं, मैं स्वयंबुद्ध मुनिराज नमूं।
प्रत्येक बुद्ध ऋषिराज नमूं, पुनि बोधित बुद्ध मुनीश नमूं।।
ऋजुमतिमनपर्यय साधु नमूं, मैं विपुलमतीयुत साधु नमूं।
मैं नमूं अभिन्न[4] सुदशपूर्वी, चौदशपूर्वी मुनिराज नमूं।।2।।

अष्टांगमहानिमित्तकुशली, नमूं नमूं विक्रियाऋद्धि प्राप्त।
विद्याधरऋषि को नमूं नमूं मैं, संयत चारणऋद्धि[5] प्राप्त।।
मैं प्रज्ञाश्रमणमुनीश नमूं, आकाशगामि मुनिराज नमूं।
आशीविषयुत ऋषिराज नमूं दृष्टीविषयुतमुनिराज नमूं।।3।।

मैं उग्रतपस्वी नमूं दीप्ततपि नमूं तप्ततपसाधु नमूं।
मैं नमूं महातपधारी को, अरु घोरतपोयुत साधु नमूं।।
मैं नमूं घोरगुणयुत साधु, मैं घोरपराक्रम साधु नमूं।
मैं नमूं घोरगुणब्रह्मचारि, आमौषधिप्राप्त मुनीश नमूं।।4।।

क्ष्वेलौषधिप्राप्त मुनीश नमूं, जल्लौषधि प्राप्त मुनीश नमूं।
विप्रुष औषधियुत साधु नमूं, सर्वौषधिप्राप्त मुनीश नमूं।

१. जिन–अर्हंत् भगवान् अथवा अरहंत, सिद्ध सकलजिन हैं और आचार्य, उपाध्याय, साधु देशजिन हैं (धवला पुस्तक ९, पृ. १०)। २. रत्नत्रयसहित अवधिज्ञानी मुनि अवधिजिन हैं (धवला पु. ९, पृ. ४०)। ३. अंत और अवधि से रहित केवली भगवान अनंतावधि जिन हैं (धवला पु. ९ पृ. ५२)। ४. टीका के आधार से अभिन्नपद है। ५. चारणऋद्धि के आठ भेद हैं–जलचारण, जंघाचारण, तंतुचारण, फलचारण, पुष्पचारण, बीजचारण, आकाशचारण और श्रेणीचारण (टीका से)।

मैं नमूं मनोबलि मुनिवर को, मैं वचनबली ऋद्धीश नमूं।
मैं कायबली मुनिनाथ नमूं, मैं क्षीरस्रावी साधु नमूं।।5।।
मैं घृतस्रावी मुनिराज नमूं, मैं मधुरस्रावी साधु नमूं।
मैं अमृतस्रावी साधु नमूं, अक्षीणमहानस साधु नमूं।।
मैं वर्धमान ऋद्धीश नमूँ, मैं सिद्धायतन समस्त नमूं।
मैं भगवत् महति महावीर, श्री वर्धमान बुद्धर्षि नमूं।।6।।

–शेर छंद –

जिनके निकट मैं धर्म पथ को प्राप्त किया हूँ।
उनके निकट ही विनयवृत्ति धार रहा हूँ।।
नित काय से वचन से और मन से उन्हीं को।
पंचांग नमस्कार करूं भक्तिभाव सो।।7।।

–दोहा –

श्री गौतम गणधर रचित, मंत्र सु अड़तालीस।
'ज्ञानमती' मैंने किया, पद्य नमाकर शीश।।8।।

श्री गणधर गुरुदेव को, नमूँ नमूँ शत बार।
सर्व ऋद्धि सिद्धी सहित, पाऊँ निजपद सार[1]।।9।।

श्रद्धान ही सम्यक्त्व है

जं सक्कइ तं कीरइ जं च ण सक्केइ तं च सद्दहणं।
केवलिजिणेहि भणियं सद्दहमाणस्स सम्मत्तं।।

अर्थ – जिस कार्य को चारित्र या अनुष्ठान को करना शक्य है-किया जा सकता है उसे करना चाहिए और जिसको करना शक्य न हो उसका श्रद्धान करना चाहिए क्योंकि श्रद्धान करने वाले के सम्यक्त्व होता है ऐसा केवली भगवान ने कहा है।

(भगवान कुंदकुंद, दर्शनप्राभृत)

१. जिनस्तोत्र संग्रह, पृ. ४७९, ४८०।

गणधरवलय स्तोत्र

(श्री सकलकीर्ति आचार्यकृत)

जिनान् जितारति-गणान् गरिष्ठान्, देशावधीन् सर्वपरावधींश्च।
सत्कोष्ठ-बीजादि-पदानुसारीन्, स्तुवे गणेशानपि तद्गुणाप्त्यै[1]।।1।।

संभिन्नश्रोत्रान्वित-सन्मुनीन्द्रान्, प्रत्येकसम्बोधित-बुद्धधर्मान्।
स्वयंप्रबुद्धांश्च विमुक्तिमार्गान्, स्तुवे गणेशानपि तद्गुणाप्त्यै।।2।।

द्विधा-मनःपर्ययचित्-प्रयुक्तान्, द्विपंचसप्त-द्वयपूर्वसक्तान्।
अष्टाङ्गनैमित्तिक-शास्त्रदक्षान्, स्तुवे गणेशानपि तद्गुणाप्त्यै।।3।।

विकुर्वणाख्यार्द्धि-महाप्रभावान्, विद्याधरां-श्चारणप्रर्द्धिप्राप्तान्।
प्रज्ञाश्रिताऽनित्यखगामिनश्च, स्तुवे गणेशानपि तद्गुणाप्त्यै।।4।।

आशीर्विषान् दृष्टिविषान्मुनीन्द्रा-नुग्रातिदीप्तोत्तम-तप्ततप्तान्।
महातिघोर-प्रतपःप्रसक्तान्, स्तुवे गणेशानपि तद्गुणाप्त्यै।।5।।

वन्द्यान् सुरैर्घोरगुणांश्च लोके, पूज्यान् बुधैर्घोरपराक्रमांश्च।
घोरादिसंसद्-गुणब्रह्मयुक्तान्, स्तुवे गणेशानपि तद्गुणाप्त्यै।।6।।

आमर्द्धिखेलर्द्धि-प्रजल्लविट्प्र-सर्वर्द्धिप्राप्तांश्च व्यथादिहंतृन्।
मनोवचःकाय-बलोपयुक्तान्, स्तुवे गणेशानपि तद्गुणाप्त्यै।।7।।

सत्क्षीरसर्पि-र्मधुरा-मृतर्द्धीन्, यतीन् वराक्षीण-महानसांश्च।
प्रवर्धमानांस्त्रिजगत्-प्रपूज्यान्, स्तुवे गणेशानपि तद्गुणाप्त्यै।।8।।

सिद्धालयान् श्रीमहतोऽतिवीरान्, श्रीवर्द्धमानर्द्धि-विबुद्धिदक्षान्।
सर्वान् मुनीन् मुक्तीवरानृषीन्द्रान्, स्तुवे गणेशानपि तद्गुणाप्त्यै।।9।

नृसुर-खचरसेव्या विश्वश्रेष्ठर्द्धिभूषा।
विविधगुणसमुद्रा मारमातङ्गसिंहाः।
भवजलनिधिपोता वन्दिता मे दिशन्त।
मुनिगण-सकलान् श्रीसिद्धिदाः सदृषीन्द्रान्।।10।।

१. जिनस्तोत्र संग्रह, पृ. ४८४।

गणधरवलय स्तुति

(पद्यानुवाद-गणिनी ज्ञानमती)

-चौबोल छंद-

जीता अंतः शत्रूगण को, ''जिन'' कहलाए गरिष्ठ भी।
देशावधि परमावधि सर्वावधि संयुत मुनिराज सभी।।
कोष्ठ बीज आदिक ऋद्धीयुत, पदानुसारी ऋद्धीयुत।
सब गणधर की स्तुति करूँ मैं, उन गुणप्राप्ति हेतु संतत।।1।।

जो संभिन्न श्रोतृ ऋद्धीयुत, स्वयंबुद्ध मुनिनाथ महान्।
जो प्रत्येक बुद्ध संबोधित, बुद्धिसहित बहु ऋद्धीमान्।।
वे गणेश गुरुदेव विमुक्तीमार्ग, कहें साक्षात् महित।
सब गणधर की स्तुति करूँ मैं, उन गुण प्राप्ति हेतु संतत।।2।।

ऋजुमति विपुलमती मनःपर्यय, ज्ञानी मुनिपुंगव ध्यानी।
दशपूर्वी चौदशपूर्वी मुनि, श्रुतपारंगत शुभ ध्यानी।।
शुभ अष्टांग महा नैमित्तिक, गुरुवर महा ऋद्धिसंयुत।
सब गणधर की स्तुति करूँ मैं, उन गुण प्राप्ति हेतु संतत।।3।।

विक्रियऋद्धी महाप्रभावी, प्राप्त सुविद्याधर ऋद्धी।
चारण ऋद्धीसंयुत प्रज्ञा, श्रमण करें प्रज्ञा ऋद्धी।।
नित आकाशगमन ऋद्धीयुत, विहरण करते वे संयत।
सब गणधर की स्तुति करूँ मैं, उन गुण प्राप्ति हेतु संतत।।4।।

आशीविष ऋद्धी दृष्टीविष, ऋद्धि सहित मुनिराज महान्।
उग्र तपोयुत दीप्ततपोयुत, उत्तम तप्त तपोयुतमान्।।
महातपोयुत घोर तपोयुत, तपश्चरण ऋद्धी संयुत।
सब गणधर की स्तुति करूँ मैं, उन गुण प्राप्ति हेतु संतत।।5।।

सुरगण वंदित घोरगुणों युत, वरऋद्धीधारी मुनिगण।
बुधजन पूजित घोरपराक्रम, श्रेष्ठ ऋद्धिधारी यतिगण।।

घोरगुणादिक ब्रह्मचर्य ऋद्धीधर खेचरनुत संयत।
सब गणधर की स्तुति करूँ मैं, उन गुण प्राप्ति हेतु संतत।।6।।

आमौषधि क्ष्वेल्लौषधि जल्लौषधि, विप्रुषऔषधि ऋद्धी।
सर्वौषधि ऋद्धी से सबकी, व्यथा हरें ये सब ऋद्धी।।
मनबल वचबल कायबली, ऋद्धी से युत सुरगण संस्तुत।
सब गणधर की स्तुति करूँ मैं, उन गुण प्राप्ति हेतु संतत।।7।।

क्षीरस्रवी घृतस्रवी मधुरस्रावी, अमृतस्रावी ऋद्धी।
वर अक्षीणमहानस युत, अक्षीण महालय भी ऋद्धी।।
वर्धमान ऋद्धीयुत त्रिभुवन, पूज्य यतीगण जग से नुत।
सब गणधर की स्तुति करूँ मैं, उन गुण प्राप्ति हेतु संतत।।8।।

सिद्धायतन नमूँ मैं भगवान, महति वीर अतिवीर महान्।
वर्धमान बुद्धी ऋद्धी में, दक्ष महा ऋषिराज प्रधान।।
सभी श्रेष्ठ मुनि पुंगव ऋषिवर, मुक्ति वधूवर मुनिगण नुत।
सब गणधर की स्तुति करूँ मैं, उन गुण प्राप्ति हेतु संतत।।9।।

नरसुर खेचर गण से सेवित, सकल श्रेष्ठ ऋद्धी भूषित।
विविधगुणों के सागर, कामदेव गजहेतु सिंह सदृश।।
भव जलनिधि के लिए पोतसम, सिद्धि प्रदायक ऋद्धि धरें।
मुझसे वंदित श्रीसिद्धीप्रद, मुनिगण सकल प्रदान करें।।10।।

–दोहा–

सकलकीर्ति आचार्यकृत, गणधरवलय स्तोत्र।
गणिनी ज्ञानमती किया, पद्यमयी सुख स्रोत।।

गणधरवलय मंत्र स्तुति

(हिन्दी पद्य-गणिनी ज्ञानमती विरचित)

-चौबोल छंद-

''णमो जिणाणं'' घातिकर्मजित, ''जिन को '' नमस्कार होवे।
सर्व कर्मजित सब सिद्धों को, नमस्कार भी नित होवे।।
कहें ''देशजिन'' सूरि पाठक, साधूगण इंद्रियविजयी।
रत्नत्रय से भूषित नित ये, इन सबको भी नमूं सही[1]।।1।।

''ओहिजिणाणं णमो'' सदा देशावधिधारी मुनिगण को ।
सदा ''णमो परमोहिजिणाणं'' परमावधिधारी मुनि को।।
सदा ''णमो सव्वोहिजिणाणं''सर्वावधि धारी मुनि को।
नमूं भावभक्ती से अवधिज्ञान ऋद्धियुत मुनिगण को।।2।।

''णमो अणंतोहिजिणाणं'' है अनंत अवधि जिनकी।
ऐसे अनंत अवधिधारी जिनवर केवलज्ञानी ही।।
अंतरहित-मर्यादरहित ज्ञानी सब ऋद्धि विभूषित हैं।
अंतातीत ज्ञान सुख हेतु नित प्रति उनको वंदूँ मैं।।3।।

''णमो कोट्ठबुद्धीणं'' ज्यों कोठे में धान्य प्रभिन्न रहें।
बुद्धि कोष्ठ में अगणित वर्षों सभी ज्ञान त्यों भिन्न रहें।।
ज्ञानधारणा की वृद्धि से कोष्ठऋद्धि प्रगटित होवे।
उन ऋद्धीयुत ऋषि को प्रणमूँ, मम बुद्धी विशुद्ध होवे ।।4।।

''णमो बीजबुद्धीणं'' संख्यों शब्द के अर्थ अनंत कहें।
तत्संबंधित अनंतलिंगरूप भी बीजपदादि कहे।।
बीज ऋद्धियुत भावश्रुतों से सब पदार्थ को ग्रहण करें।
ऐसे ऋद्धि सहित गणधर को, नमूँ सर्व अज्ञान हरें।।5।।

''णमो पदाणुसारीणं'' यह ऋद्धि पद का अनुसरण करे।
अनुसारी प्रतिसारी बुद्धि उभयसारि त्रय भेद धरे।।

१. जिनस्तोत्र संग्रह, पृ. २८४ से २९१ तक।

बीजपदों से उपरिम जानें, अधस्तनों को उभयों को।
जाने ऋद्धि पदानुसारी, वंदूँ उन ऋद्धीयुत को।।6।।

''णमो संभिण्णसोदाराणं'' मुनिवर जिससे पृथक्-पृथक्।
श्रोत्रेन्द्रिय से अक्षर अनअक्षर भाषा समझें युगपत्।।
संख्यातों भाषा युत जिनवर दिव्यध्वनी को ग्रहण करें।
मुनि संभिन्न श्रोतृऋद्धी युत, उनको हम नित नमन करें।।7।।

''णमो सयंबुद्धाणं'' जो मुनि स्वयंबुद्ध हो साधु बनें।
''णमो पत्तेयबुद्धाणं'' प्रत्येक बुद्ध जो साधु बनें।।
सदा ''णमो बोहियबुद्धाणं'' संबोधित हो दीक्षा लें।
इन ऋद्धीयुत ऋषिगण को मैं, वंदूँ कर्म कलंक टलें।।8।।

''णमो उजुमदीणं'' ऋजुमति ऋद्धि मनःपर्ययधारक।
सरल मनोवचकाय अर्थ को जानें उन्हें नमूँ सांप्रत।।
''णमो विउलमदीणं'' मुनि जो विपुलमती ज्ञानधारक।
कुटिल मनो वच काय अर्थ को, जानें उन्हें नमूँ नित प्रति।।9।।

''णमो दसपुव्वीणं'' जो मुनि दशपूर्वों तक पढ़ते हैं।
विद्या के प्रलोभ से च्युति नहिं वे अभिन्न दसपूर्वी हैं।।
सदा ''णमो चउदसपुव्वीणं'' चौदह पूर्व धरें श्रुतधर।
श्रुतकेवलि मुनि को प्रणमूं मम, ज्ञान प्रगट हो सकल विमल।।10।।

''णमो अट्ठंगमहाणिमित्त- कुशलाणं'' ऋषिवर्य महान् ।
अंग स्वप्न व्यंजन स्वर लक्षण छिन्न भौम नभ आठ प्रधान।।
जो इनसे शुभ अशुभ जानते, वे निमित्तज्ञानी गुरुवर।
इस ऋद्धीयुत उन मुनिगण को, नमूँ हमें वे हों शुभकर।।11।।

''णमो विउव्वइड्ढिपत्ताणं'' विक्रिय ऋद्धि सहित संयत।
अणिमा महिमा लघिमा प्राप्ती वशित्व अरु प्राकाम्य ईशित।।
कामरूपिता आठ भेदयुत , धरें विक्रिया ऋद्धी जो।
उनको वंदूं भक्ति भाव से, स्वात्मलाभ हो झट मुझको ।।12।।

''णमो विज्जाहराणं'' मुनिवर तपविद्या से भूषित हैं।
पढ़कर विद्यानुप्रवाद को, संयत भी विद्याधर हैं।।
नहिं उपयोग करें विद्या का , ऋद्धि सहित मुनिराज महान् ।
सम्यक् विद्या प्राप्ती हेतु, नित प्रति उनको करूं प्रणाम।।13।।

''णमो चारणाणं'' चारणमुनि जल तंतु फल पुष्प सु बीज।
इन पर चलते, जंघा, श्रेणी नभ आलंबन करें यतीश।।
फिर भी जल आदिक जंतु को, बाधा नहिं होती किंचित्।
आठ भेद बहु भेद सहित चारण ऋद्धीश्वर नमूं सतत।।14।।

''णमो पण्णसमणाणं'' प्रज्ञाचार प्रकार कहें मुनिजन।
औत्पत्तिक वैनयिक कर्मजा स्वाभाविक बुद्धी उत्तम।।
इन चारों प्रज्ञायुत साधू श्रुतपारंगत ऋद्धि सहित।
नमूँ सदा बहुभक्तिभाव से मुझ में प्रज्ञा हो प्रगटित।।15।।

''णमो आगासगामीणं'' जो मुनि आकाश गमन करते।
ढाईद्वीप में इच्छित स्थानों पर तीर्थ नमन करते।।
तप बल से ये ऋद्धिधारी मुनिगण भव संकट हरते।
अविनश्वरा ऊर्ध्वगति हेतू आदरयुत मैं नमूँ उन्हें।।16।।

सदा ''णमो आसीविसाणं'' विषवत् आशिष जिनकी है।
अमृतरस आशिष है फिर भी अनुग्रह द्वेष नहीं कुछ है।।
''णमो दिट्ठिविसाणं'' दृष्टीमन विषवत् अरु अमृतवत्।
फिर भी क्रोध हर्षविरहित उन, मुनि को वंदूँ मस्तक नत ।।17।।

''णमो उग्गतवाणं'' तप उग्रोग्र,अवस्थित द्विविध कहे।
नित उपवास वृद्धि कर -कर भी, शक्ति क्षीण नहीं किंचित् है।।
तप से प्रगट ऋद्धि तपवृद्धिंगतकारी उन ऋषिगण को।
बाह्याभ्यंतर - तपः सिद्धि हेतू वंदूँ नित उन सबको।।18।।

''णमो दित्ततवाणं'' तनुबल तेज दीप्त होता जिनका।
नहिं आहार क्षुधा बिन उनके, फिर भी तेज नहीं घटता।।

बहु उपवास करें तप बल से, दीप्त तपो ऋद्धीसंयुत।
तनु की ममता नाश हेतु मैं, नमूँ भक्तियुक्त उनको नित।।19।।

''णमो तत्ततवाणं'' तप से, मलमूत्रादि तप्त होते।
मुनि आहार ग्रहण करते, फिर भी नीहार रहित होते।।
तप्ततपस्वी ऋद्धीधारी तप से कर्म सुखाते हैं।
उन मुनिगण को मैं नित वंदूँ , मम अघ सर्व नशाते हैं।।20।।

''णमो महातवाणं'' जो मुनि विक्रिय चारण ऋद्धी सहित।
पाणिपात्र गत भोजन को अमृत अक्षीण करें संतत।।
सब ऋद्धीज्ञानादि सहित मुनि, महातपो ऋद्धीयुत हैं।
महातपस्वी उन मुनिगण को, वंदूँ भाव भक्तियुत मैं।।21।।

''णमो घोरतवाणं'' जो मुनि घोर तपस्या नित करते।
सिंह सर्प उपसर्ग भयंकर, से भी किंचित् नहिं डरते।।
वृक्ष मूल आतापन आदिक तप तपतें निर्भय विचरें।
घोर तपस्वी महाप्रभावी, ऋषिगण को हम नमन करें।।22।।

''णमो घोरगुणाणं'' जो मुनि लक्ष चुरासी गुण संयुत।
घोरगुणी ऋद्धी भूषित साधूगण उनको वंदूँ नित।।
''णमो घोरपरक्कमाणं'' घोरपराक्रम ऋद्धि सहित।
त्रिभुवन पलटन करन शक्तियुत मुनिगण को मैं नमूँ सतत।।23।।

सदा ''णमो घोरगुणबंभयारीणं'' मुनि चरित धरें।
उनकी तप महिमा से कलह वैर वध दुर्भिक्षादि टलें।।
बिन इच्छा भी घोर गुणादिक ब्रह्मचारि ऋद्धिबल युत।
सबके उपसर्गादि नशें उन, मुनि को प्रणमूँ भक्तीयुत।।24।।

''णमो आमोसहिपत्ताणं'' जिनमुनि का स्पर्श महान्।
सबके महाव्याधि कष्टों को दूर करन में कुशल प्रधान।।
इस आमर्षौषधि ऋद्धीयुत मुनिगण को मैं नमूँ सदा।
भव व्याधी के नाश हेतु मैं भक्ति वंदना करूं मुदा।।25।।

''णमो खेल्लोसहिपत्ताणं'' जिन मुनि का लार कफादिक मल।
औषधिरूप हुआ भक्तों के, रोग कष्ट को हरे सकल।।
उन क्ष्वेलौषधि ऋद्धि सहित मुनिगण को सदा नमूँ रुचि से।
भवदुःख संकट नाश करन को, नित प्रति स्तुति करूं मुद से।।26।।

''णमो जल्लोसहिपत्ताणं'' जिन मुनि का बाह्य अंग मल सब।
स्वेद विंदुरजकण से संयुत रोगकष्ट सब हरे सतत।।
उन जल्लौषधि ऋद्धि विभूषित ऋषिगण को मैं सदा नमूँ।
भव भय व्याधि आर्तिपीड़ा सब, नाश करो नित विनय करूँ।।27।।

''णमो विप्पोसहिपत्ताणं'' जिन मुनि का मल मूत्रादि सभी ।
औषधिरूप बने सबजन के, रोग दूर करता नित ही।।
ऐसे विप्रुष औषधि ऋद्धी सहित महामुनि पुंगव को।
वंदूँ त्रिकरण शुचि करके मैं , मम सब व्याधी का क्षय हो।।28।।

''णमो सव्वोसहिपत्ताणं'' जिन को सर्वौषधि ऋद्धि।
प्रगट हुई है तप के बल से उन मुनि का सब मल आदी।।
संस्पर्शित वायु भी जन के रोग कष्ट विष दूर करे।
उन सर्वौषधि ऋद्धि विभूषित मुनि गण को हम नमन करें।।29।।

''णमो मणबलीणं'' जो मुनि तप बल से मन बल धारी।
द्वादशांगश्रुत एक मुहूरत में ही मनन करें भारी।।
फिर भी खेद नहीं होता है, उन मन बल ऋद्धी संयुत।
मुनिगण को मैं नमूँ सदा ही, मेरा मनबल बढ़े सतत।।30।।

''णमो वचिबलीणं'' जो मुनि वचनबली ऋद्धि संयुत।
द्वादशांग श्रुतको पढ़ लेते एक मुहूरत में ही नित।।
उच्चध्वनी से पढ़ते रहते, फिर भी श्रम नहिं हो किंचित् ।
वचन बली ऋषिगण को प्रणमूँ, मम वचबल सिद्धि हो नित।।31।।

''णमो कायबलीणं'' जो मुनि काय बली ऋद्धीभूषित।
तीनलोक को अंगुलि पर ही उठा सकें अतिशक्तीयुत।।

तपबल से तनुनिर्मम होकर कायबली बन जाते हैं।
उस बल से कर्मारी जीतें उन मुनिगण को प्रणमूँ मैं।।32।।

''णमो खीरसवीणं'' जो मुनि क्षीरस्रवी ऋद्धीयुत हैं।
अंजलिपुट की विषवत् वस्तु दूधभाव धारे क्षण में।।
जिनके वचन क्षीरवत् पुष्टि करते भक्त जनों को नित।
उन क्षीरस्रावी ऋद्धीयुत मुनिगण को मैं नमूँ सतत।।33।।

''णमो सप्पिसवीणं'' जो मुनि घृतस्रावी ऋद्धीयुत हैं।
करपुट में रुक्षाहारादिक घृतसम होता इक क्षण में।।
जिनके वच भी घृतवत् पौष्टिक होते भविजन हितकारी।
उन मुनि, गणधरगण को वंदूँ, मम भव ताप हरें भारी।।34।।

''णमो महुरसवीणं'' जो मुनि मधुरस्रवी हैं कहलाते।
उनके करपुट में नीरस आहार मधुर रस बन जाते।।
उनके वच भी भक्तजनों को प्रिय हित लगें महागुणकर।
उन मधुरसस्रावी ऋद्धीयुत मुनिगण को वंदूँ सुखकर।।35।।

''णमो अमियसवीणं'' जो मुनि अमृतस्रवी ऋद्धियुत हैं।
अंजलिपुट नीरस विषवत् आहार बने अमृत सम है।।
उनके वच भी अमृतवत् तृप्तीकर सुखप्रद सबको हैं।
उन अमृतस्रावी ऋद्धीश्वर मुनिपुंगव को प्रणमूँ मैं।।36।।

सदा ''णमो अक्खीणमहाणसाणं'' तपमहिमा जिनकी।
जिस घर में आकर करें मुनि उस दिन भोजन क्षीण नहीं।।
जिस स्थान में बैठें उसमें असंख्यात सुर नर पशु गण।
बैठ सुने वच उन अक्षीण ऋद्धियुत मुनि को मम प्रणमन।।37।।

''णमो वड्ढमाणाणं'' जो मुनि वृद्धिंगत चारित धारें।
वर्धमान ऋद्धीयुत संतत कर्म शत्रु का भय टारें।।
उन निर्दोष चरितधारी मुनिगण गणधरगण को वंदूँ।
रत्नत्रय वृद्धिंगत हेतू विघ्न पुंज को नित खंडूं।।38।।

सदा ''णमो लोए सव्वसिद्धायदणाणं'' त्रिभुवन में।
सिद्धायतन कहें कृत्रिम अकृत्रिम जिनगृह जिनकृति हैं।।
सिद्धशिला चंपा, पावा, सम्मेदशिखर आदिक थल हैं।
सर्व निषद्या भूमि नमूं, सिद्धायतनों को वंदूं मैं।।39।।

''णमो भयवदो महदि–महावीर-वड्ढमाण-बुद्धिरिसीणं''।
महावीर भगवान् महित जो वर्धमान बुद्धर्षिगणं।।
उनको प्रणमूँ बार-बार मैं वे सब ऋद्धि विभूषित हैं।
निज सर्वार्थ सिद्धि हेतू मम वीरप्रभू को शिरनत है।।40।।

इस विध गणधरवलय मंत्र ये गौतमस्वामी रचित कहे।
वीरप्रभू के निकट धर्मपथ पाया श्री गौतमगुरु ने।।
अतः वीरप्रभु को वे गणधर बारंबार नमन करते।
वीरप्रभू को गौतमगणधर सब गणधर को हम नमते।।41।।

-दोहा-

इस विध गणधर वलय का, संस्तव मंत्र समेत।
पढ़े सुने सो ''ज्ञानमति'', सिद्धि लहें शिवहेतु।।42।।

सप्तर्षि वंदना

सुरमन्यु, श्रीमन्यु ऋषिवर, श्री निचय, सर्वसुंदर स्वामी।
जयवान, विनयलालस गुरुवर जयमित्र सप्तऋषि जगनामी।।
ये मथुरानगरी में आये, महामारी व्याधी हुई शांत।
मैं नमूँ सहस्रों बार इन्हें, ये रोग शोक का करें अन्त।।1।।

-गणिनी ज्ञानमती

श्री गणधरवलय स्तुति

(श्री शुभचंद्राचार्यकृत)

-बसंततिलका-

बुद्ध्यौषधीरससुविक्रियदेशवीर्य-
व्योमक्रियर्द्धितपसा सहितान् मुनीशान्।
सत्केवलावधिमनःपरिगान् सुबीज-
सत्कोष्ठबुद्धिपदसारितया प्रसिद्धान्[1]।।1।।

श्रोतॄन् सुभिन्नसुगवां लघुदूरतोक्ष-
स्पर्शश्रवोरसनिका, वरनासिकानाम्।
वेतॄन् सुगोचरगणान् दशसर्वपूर्व-
वेतॄन् निमित्तकुशलान् स्तुमहे महर्षीन्।।2।।युग्मं।।

प्रत्येकबुद्धवरवादिगणान् प्रधीकान्
बुद्ध्यर्द्धियुक्तिकलितान् द्विनव स्तवीमि।
विट् खिल्लजल्लपरमामसु सर्वतश्च।
रोगापहान् वसुविधान् वरदृष्टिचक्रैः।।3।।

-शार्दूलविक्रीडितम्-

कुर्वाते लघु वाग्दृशौ सुभविनां मृत्युं विषेण क्रुधा।
यत्पाणावपि दुग्धमध्वमृतसत् प्राज्यप्रभं जायते।।
दुर्भोज्यं गदितायकैः सुपतितं गृह्णन्ति वाचो नरां-
स्तद्वस्तान् मुखदृग्विषामृतघृताद्यास्रावणो नौम्यहम्।।4।।

-आर्या-

लघिमागरिमामहिमा–प्राकाम्यैश्वर्यकामरूपित्वैः।
व्यधनाप्तिवश्यधातैः स्तौमि मुनीन् विक्रियर्द्धिगतान्।।5।।

---

१. श्री गणधरवलय पूजा, पृ. ७, ८।

-शार्दूलविक्रीडितम्-

भुक्तं यत्र दिने गृहे यतिजनैर्न क्षीयते तद्दिने।
तच्छेषं च सुभोजितेऽखिलनरे यत्र स्थितं तत्र ये।।
सर्वे नाकिनरादयः सुखतया तिष्ठन्ति तुच्छावनौ।
तेऽक्षीणादिमहानसालयगुणा भान्तूभये सर्वतः।।6।।

-उपजातिः-

अन्तर्मुहूर्त्तेन श्रुतं समस्तं, ध्यायन्ति ये कण्ठविषादमुक्ताः।
पठन्ति लोकं न्यसितुं क्षमाश्चांगुल्या त्रिधा ते बलिनो भवन्तु।।7।।

-आर्या-

दिविजलदलफलकुसुमबीजाग्निशिखासु जानुपंक्तिगताः।
चारणनामान् इमे क्रियर्द्धियुक्तान् नमामि च वैतान्।।8।।

-उपजातिः-

उग्रं तपोदीप्ततपस्तपन्तु तप्तं तपो घोरतपो महच्च।
ये सप्तधा घोरपराक्रमाश्च ब्रह्माऽपि ते सन्तु विदे त्रिगुप्ताः।।9।।

-बसंततिलका-

नानातपोऽतिशयलब्धमहर्द्धिमुख्याः
सूर्यादयो मुनिवरा जगतां प्रयान्तः।।
कुर्वन्तु ऋद्धिनिचयं शुभचन्द्रकस्य
संघस्य दुष्टदुरितानि हरन्तु सन्तः।।10।।

।।इति गणधरवलयस्तवनं समाप्तम्।।

श्री गणधरवलय स्तुति

(श्री पद्मनंदि-आचार्यकृत)

-घत्ता-

गुणगणमणिहारस्फुरदवतार-प्रविराजित हृदय प्रवर।
जय गणधर वलयस्मरशर विलय, प्रतिबोधित मतिमन्निकर[1]।।1।।

-पद्धतिका-

जय जिन सर्वाङ्गविपद्विनाश, जयता-दवधिप्रथितप्रकाश।
परमावधि-परमामृतगभीर, गणधरवलयाप्तभवाब्धितीर।।2।।

सर्वाभिनिबोध-बुधप्रपूज्य, प्रतप-दनन्त नितान्तराज्य।
जय कोष्ठस्थितबीजप्रबोध, बीजर्द्धिबुद्धिखण्डितविरोध।।3।।

सुपदाप्ति सर्वशास्त्रप्रवीण, विविधावधान बुधजनधुरीण।
प्रत्येकबुद्ध संसारसार स्वयमाप्त शान्ततत्त्वावतार।।4।।

जय सागरवद् बोधितबुधेश, सरल स्मृति हृत्पर्यय गणेश।
जन कृत कुटिलत्व स्फुट विचार, दशपूर्व सर्वतो मुखधिपार (उदधिपार)।।5।।

जय निखिलश्रुतलक्ष्मीनिवास, जनमत निमित्त विद्याविलास।
विकृतेन तिरस्कृत नाकिचक्र, विद्याधर विद्यासिन्धु नक्र।।6।।

व्योमप्रवृत्त समशत्रुमित्र, प्रज्ञाविशेष पावनचरित्र।
सुरवर्त्मयान वीक्षित विमान, दंष्ट्रा पीडन रिपुमृतिनिदान।।7।।

करुणाकृत दृक्पीयूषवर्ष, सुतपो निर्वाह नितान्तहर्ष।
चन्द्रार्क कोटि समधिक विकाश, अन्तर्विलीन विधिवत्कृताश।।8।।

जय पक्षमास वर्षोपवास, अविहितचर्वित तनुमृगनिरास।
क्षुत्प्रभृति परीष विपदगम्य, कर्म क्षितिधर भिदुराप्तनम्य।।9।।

चिदचिदुपसर्ग सहनैकधीर, समपक्व विपत्यन्बुद समीर।
खेलौषधर्द्धि शोषित रुगङ्ग, तनुमलमृत जनतामयभुजङ्ग।।10।।

१. श्री गणधरवलय पूजा संग्रह, पृ. २९ से ३२ तक।

सद्ब्रह्मबिन्दुनाशित-जनार्त, सर्वौषर्द्धि-भुवनाप्तवार्त।
मनसा वचसा वपुसा तु येऽपि, बलिनः शिवदास्तु भवन्तु तेऽपि।।11।।

क्षीराज्य-मधुर-पीयूषवर्षि-वृन्दं नमामि गुणिनां[1] प्रहर्षि।
अक्षीणमहानस-कारिणोऽपि, वरवर्द्धमान-गणधारिणोऽपि।।12।।

सिद्धायतनव्रतिनो नमामि, बुद्ध्यृषीनपि शरणं व्रजामि।
ऋद्धर्द्धि-विभूषित-सर्वदेह, प्रणमामि गणेश्वर-सुगुणगेह।।13।।

-घत्ता-

इति जिनपतिमतयः स्तुतयतिपतयः, प्रविततशिवसुखानि कुरुत।
गणधरवलयमिताः कृतसुकृतरताः, सततमिदं जनता भजत।।14।।

मध्यलोक जिनालय वंदना

जय जय मध्यलोक के जिनगृह चार शतक अट्ठावन।
जय जय अकृत्रिम मणिमय जिनमंदिर जन मन भावन।।
जय जय पाँचमेरु के अस्सी जिनमंदिर सुखकारी।
जय जंबूशाल्मलि तरु आदिक दश जिनगृह दुःख हारी।।5।।
जय जय कुलपर्वत के जिनगृह तीस अकृत्रिम शोभें।
जय जय गजदंतों के जिनगृह बीस भव्य मन लोभें।।
जय जय जय वक्षार गिरी के अस्सी जिनगृह सुंदर।
जय जय जय विजयार्ध अचल के जिनगृह इक सौ सत्तर।।6।।
जय जय इष्वाकार अचल के चार जिनालय शाश्वत।
जयजय मनुजोत्तर पर्वत के चार जिनालय भास्वत।।
जय जय नंदीश्वर के बावन जिनमंदिर अभिरामा।
जय जय कुंडलगिरि रुचक गिरी के चार-चार जिनधामा।।7।।

-गणिनी ज्ञानमती

१. 'गणिनां' ऐसा पाठ हो सकता है।

श्री गणधरवलय स्तुति

(श्री प्रभाचंद्राचार्यकृत)

स्तोष्ये गणधरान् नित्यं सर्वकर्मक्षयोन्मुखान्।
तपोजनितमाहात्म्यचमत्कृतजगत्त्रयान्[1]।।1।।

नमो जिनेभ्यस्तेभ्योऽस्तु विजयाद्घातिकर्मणां।
संसारगहनात्यन्तव्यसनावाप्तिकारिणां।।2।।

जयेन देशतो घाति-कर्मणां दुःखदायिनां।
देशावधिभ्यस्तेभ्योऽस्तुनमो दुरितहानये।।3।।

सुसूक्ष्मार्थावगाहिभ्यः कर्मणामेव कर्षणात्।
परमावधिसर्वावधिभ्यो नमो नमोऽस्तु नः।।4।।

भवान्तरानुगामीयोऽनन्तोऽवधिरितीरितः।
अनन्तावधिसंज्ञेभ्यस्तद्धारिभ्यो नमो नमः।।5।।

नमोऽस्तु कोष्ठबुद्धिभ्योऽवधार्यार्थचयं पुनः।
प्रकाशकेभ्यो धान्यानां बहूनां कोष्ठगेहिवत्।।6।।

बीजं क्षेत्रे यथोप्तं भवति बहुगुणं प्राप्य कालादिसार्थं।
लान्वा[2] बीजं पदानां सुविहिततपसो ये यतीन्द्रा तथैव।
जानन्त्यर्थाननेकान् जिनवरगदितान् शुद्धसद्ध्यानधीरा-
स्तेभ्यो नित्यं नमस्तान्मम विशुद्धधियो बीजबुद्ध्यात्मकेभ्यः।।7।।

नमः पादानुसारिभ्यो येऽवधार्य पदं श्रुतात्।
आद्यं वान्त्यं सुतपसो जानन्ति निखिलं धिया।।8।।

यस्यामृद्धौ चक्रिणः सैन्यजातं, मर्त्याश्चोष्ट्रादि-ध्वनिं संप्रधार्य,
भिन्नं भिन्नं कार्यतो ये विदन्ति ते संभिन्न-श्रोतृनाथा नमस्याः।।9।।

परोपदेशं वैराग्य, कारणं यतयश्च ये।
अनपेक्षैव निर्विण्णाः स्वयंबुद्धा हि ते मताः।।10।।

१. श्री गणधरवलय पूजा संग्रह, पृ. ७२ से ७९ तक। २. लात्वा ऐसा पाठ संभव है।

नमः प्रत्येक बुद्धेभ्यो ये निर्वेदस्यकारणं।
किंचिद् दृष्ट्वा ययु बोधिं नाभेयो नर्त्तकीमिव।।11।।

नमो प्रर्त्याबोधित बुद्धेभ्यो, ये भोगासक्तमानसाः।
प्रदर्श्याऽनित्यतां तत्र, नीता निर्वेदितां जिनाः।।12।।

प्रष्टुश्चितगतो योऽर्थो मन इत्युपचर्यते तान्
तुर्यज्ञानिनो नौमि ऋजुचिन्तितसूचकान्।।13।।

तदर्थादधिकं वक्र-मृजुं वा चिन्तितं तु ये।
जानन्ति विपुलज्ञानिभ्यस्तेभ्यो भवतान्नमः।।14।।

दशपूर्वा-नभिन्नान् ये धरन्ति धृतसंयमाः।
नमोऽस्तु दशपूर्विभ्यस्तेभ्यः सत्संयमाप्तये।।15।।

न कष्ठहानिर्गलानिर्वा श्रुतं येषु पठत्स्वपि।
स्तवीमि स्तवनार्हाश्च तान् चतुर्दशपूर्विणः।।16।।

अङ्गं स्वरं व्यञ्जनमांतरिक्षं, छिन्नं च भौमं नरलक्षणं च।
स्वप्नं निमित्तानि हि येऽवधार्य विदन्ति लोकस्य शुभाशुभानि।17।।

नमस्तेभ्यो मुनीन्द्रेभ्यः कुशला ये महर्द्धयः।
अष्टांगेषु निमित्तेषु तपोमाहात्म्यशंसिषु।।18।।

अणिमादिगुणोपेता विक्रिया यत्प्रभावतः।
जायते विक्रियर्द्धि सा तद्धरान्नौमि सन्मुनीन्।।19।।

साङ्गोपाङ्गश्रुतं धीरा ये धरन्ति महत्तराः।
विद्याधरमुनिभ्योऽस्तु नमस्तेभ्यः पुनः पुनः।।20।।

नमोऽस्तु चारणाख्येभ्यो मुनिभ्यो विचरन्ति ये।
जंघाश्रेण्यग्निशिखाषु जलतन्तुदलादिषु।।21।।

ये तु विद्याधराः सन्तः तपो गृह्यन्ति ते ततः।
स्युः प्रज्ञाश्रमणास्तेभ्यो नमः प्रत्यूहशांतये।।22।।

चारणा अपि यैस्तेभ्यो विशिष्टत्वेन खाध्वगाः।
आकाशचारणास्तेभ्यो नमस्तद्गुणा वाञ्छया।।23।।

शापानुग्रहसामर्थ्यं येषु ऋद्ध्यनुभावतः।
आशीर्विषेभ्यस्तेभ्योऽस्तु मुनिभ्यो नमनं सदा।।24।।

शत्रौ मित्रे येऽप्युदासीनभावाः अप्येतेषां सत्तपोजर्द्धि वीर्यात्।
शांते शिष्टे दुष्टजाते विषाभे दृष्टी तेभ्यस्तान् नमोदृग्विषेभ्यः।।25।।

पंचम्यामष्टम्यां कृतो, पवासाश्च ये चतुर्दश्यां।
द्वित्रैरपि चाऽलाभै रुग्रतपोभ्यो नमो दृढतपोभ्यः।।26।।

उग्रेण तपसा येषां, देहदीप्त्या हत तमः।
तेभ्यो दीप्ततपोभ्योऽस्तु नमनं सर्वशान्तये।।27।।

तप्तायःपिण्डवद् ये तु, गृहीताहार शोषितः।
निर्निहाराः प्रकुर्वन्तु नस्तप्ततपसः श्रियं।।28।।

महातपोभ्यः स्वस्त्यस्तु येऽनुष्टानपरा स्तपः।
पक्षमासोपवासादि विधिना विदधत्यरं।।29।।

नमाम्यहं घोरतपोभियुक्तान् नदीतटे पर्वतगह्वरे च,
हिमप्रपातैर्हरिघोरघोषै-र्दंशादिकैर्ये न चलन्ति योगात्।।30।।

येषां तपोऽनुभावेन महान्तोऽत्यद्भुता गुणाः।
विश्व घोरगुणाः पान्तु यतयस्ते यशोऽधिकाः।।31।।

येषां पराक्रमोऽचिन्त्यो दुर्द्धरव्रतधारणे।
भक्तान् पुनन्तु यमिनो धीरा घोरपराक्रमाः।।32।।

येषां निरतिचारं तु ब्रह्मचर्यं स्फुरद्गुणं।
स्तुत्यास्ते मुनयो घोर गुणाब्रह्मोपलक्षिताः।।33।।

येषामामोऽपक्वमन्नं च खेलो निष्ठयूतिर्वा जल्लमङ्गादशेषात्।
घृष्टाज्जातं यन्मल विप्रुषस्तु, स्वेदोत्पन्नाविन्दवस्ते मुनीन्द्राः।।34।।

मूत्रकेशा वा नखा विट्च येषां रोगान् हन्युश्चातुराणां च सर्वे।
ईडे पंचापीह तान् सन्मुनीन्द्रान्, ऋद्धिप्राप्तानामजल्लादिभेदाम्।।35।।
मनोवचनकायैर्येऽसङ्ग बलयुताः पृथक्।
तेभ्यो मनोवचःकायबलिभ्यस्तान् त्रिधा नमः।।36।।

तपोऽतिशयतो येषां पाणौ कदशनं यदि।
क्षीरस्वादु भवेत्क्षीर-स्राविभ्योऽस्तु नमः सदा।।37।।
तथैव सर्पिः स्राविभ्यो नमो यन्पाणिपात्रग।
सर्पिःस्वादु भवेदन्नं सर्पिःस्रावि च पुष्टिदम्।।38।।
पाणिपात्रे स्थितं येषां कटुकं मधुरं भवेत्।
अमृतं चापि मधुराऽ-मृतस्रावियुगं स्तुवे।।39।।
यद्दत्तशेषं शिविरेऽपि भोजिते न क्षीयते धाम्नि चतुष्करोन्मिते।
येषां सुरौघाकुलतापरिच्युताः स्युस्तान् स्तुवे-ऽक्षीणमहानसालयान्।।40।।
ये सिद्धायतनागाढ तपोजनित शक्तितः।
नमस्तेभ्यो मुनिभ्योऽस्तु मुमुक्षुभ्यो महादरात्।।41।।
वर्द्धमाना हि येषां स्यात्पूजातिशयसंपदा।
ज्ञानस्य वा मुनिभ्योऽस्तु नमस्तेभ्योऽघहानये।।42।।
बोधत्रय्यायुतो यः समजनि भगवान् यश्च मेरौ सुरोघैः।
वीरस्तस्य प्रकम्पादकृत-वसुमहावृष्टिमुख्योत्सवौघैः।।43।।
बृद्धैर्यो वर्द्धमानः सुरविकृतमहानाग शीर्षे पदं यो।
धृत्वाऽह्वायावतीर्णो गदित इति महावीर नामा शिवारुट्।।44।।
वाराणस्यां तपस्यन् स्थिरपदयुगलेन स्थितो यश्च सोढा।
रुद्र क्लृप्तोपसर्गान् महति पदयुतः श्रीमहावीर नामा।।45।।
सोऽयं सर्वर्द्धिसिद्धिं विबुधपतिपदं चक्रितीर्थेशलक्ष्मीं।
दिश्यात् सद्भक्तिकेभ्यः सुरजनविनुतः सर्वरोगप्रमाशं (युगमं)।।46।।

श्री गणधरवलय स्तुति

(श्रीमट्टिमडि-भट्टोपाध्यायकृत)

कोष्ठावधिप्रमुखबोधमहासमुद्र-पारंगतान् गमयितुं च ततः समर्थान्।
श्रेणीद्वयाश्रयणयोग्यसमाधिनिष्ठान्, बुद्ध्यर्द्धिभिस्तु सहितान् स्तुमहे महर्षीन्[1]।।1।।

दीप्तोग्रतप्तमहदादितपःप्रभेदैः, सम्यक् प्रभावितसुनिर्मलधर्ममूर्तीन्।
कायेन सार्द्ध-मतिकर्शितकर्मशक्ति-स्तान् तापसर्द्धय्धितीन् स्तुमहे महर्षीन्।।2।।

तोयाद्युपायाद्भुत शक्तिभेद-भिन्नाष्टधा प्रथितचारणयोगिवर्यान्।
नानाणिमादिनिपुणांश्च तपः प्रभावां-स्तान् विक्रियर्द्धि सहितान् स्तुमहे महर्षीन्।।3।।

तापत्रयैरतितरामिह तप्यमानेष्वेतेषु जीवनिवहेषु दयार्द्रभावात्।
उद्भावितैः पृथुगुणै-रुपकृर्वतोऽन्यां-स्तानौषधद्धय्र्धिपतीन् स्तुमहे महर्षीन्।।4।।

आज्यादिकानपि रसा-नखिलान् विसृज्य, तीव्र तपो मुनिवरास्त्वचरंस्तथापि।
तानेव ते खलु रसान् न परित्यजन्ति, चित्रं रसद्धर्यऽतिशयान् स्तुमहे महर्षीन्।।5।।

कुर्वन्ति ये क्षपयितुं स्वबलं मुनीन्द्रा, मासाद्युपोषताविधि हि तथापि चित्रम्।
तेनैव तद्बलमनीदृशवृद्धिमन्त-स्तां स्तद्बलद्धय्र्धि-पतीन् स्तुमहे महर्षीन्।।6।।

त्यागानुकम्पनगुण-प्रणिधिप्रधान-दिव्यानुभावतपसामतिशक्तियोगात्।
अत्यद्भुताक्षयगुण-प्रकृतिप्रसन्नां-स्तानक्षयद्धय्र्धिपतीन् स्तुमहे महर्षीन्।।7।।

युष्माकं व्रतिनां स्पृहाविरहिणां नैवोपकारोऽस्त्यदः।
पूजादेश्च तथापि पूजनविधि भक्त्या सदा तन्वताम्।।
अत्रामुत्र सुखं भवत्यभिमतावाप्तिश्च संपद्यते।
तद्युष्मा-नभिपूज्य-भक्तिनिरता स्तुत्वा प्रवंदामहे।।8।।

युष्माकं महतामचिन्त्यमहिमा प्रोद्भासिनां सद्गुणाः।
संख्यामर्प्यातवर्तिनस्तदखिलान संस्तोतुमिष्टेऽत्र कः।।
तत्सर्वस्तुतिवत्फलेन सदृशी खल्वेकदेशस्तुतिः।
तद्ष्मद्गुणलेशमात्रमपि च स्तुत्वा कृतार्थोऽस्म्यहम्।।9।।

---

१. श्री गणधरवलय पूजा संग्रह, पृ. १०५ से १०८ तक।

कारुण्यामृतसिन्धवः परिलसद्भव्याब्जिनीबान्धवः।
सद्विद्यानतिविन्दवः सुमनसा मानंदकारीन्दवः।।
लोकान्तेऽत्र सुकीर्त्तियः स्फुटगुणव्रातः शुचिस्फूर्तयः।
संशुष्यद्भववार्द्धयो मुनिवरा नन्दुन्तु सप्तर्द्धयः।।10।।

संस्पर्शमात्र विनिवारित सर्वदोषां, सौभाग्यभाग्यजयकार्मणदिव्यभूषाम्।
मुक्त्यङ्गनापरिणयोत्सवमुख्यशेषां, भक्त्या भजामि निजमूर्ध्नि–प्रसिद्धशेषां।।11।।

युष्मानागमभारत्वरूप (भाररूप)महतो भक्त्या समाराधयन्।
सम्यक्त्वं च त्रिधोपचारविधिना तत्र प्रमादोऽस्ति च।।
तत्सोढव्य मुखोत्थवत्सलतया देवैरलं वो गुणान्।
ध्यायन् याम्यधुना गृहं स्वमचिराद् भूयात्पुनर्दर्शनम्।।12।।

इत्थं गणाधिपतिचक्रमहाभिषेकं, पूजां पुरा नियमवानिति यः करोति।
सत्स्वर्गसौख्यमनुभूय ततोऽवतीर्य, प्राप्नोत्यनन्तसुखमक्षयमोक्षलक्ष्म्याः।।13।।

केवलज्ञानप्राप्त श्रीपार्श्वनाथ वंदना

-उपजातिछंद-

श्री पार्श्वनाथः स्वपरात्मविज्ञः,
श्रेणीं श्रितः स्वात्मजशुक्लयोगैः।
घातीनि हत्वा जगदेकसूर्यः,
कैवल्यमाप्नोत् तमहं स्तवीमि।।

स्वपरभेदवित् पारस स्वात्मज, ध्यानशुक्ल श्रेणी पर चढ़।
घात घातिया केवल पायो, त्रिभुवनसूर्य नमूँ शुचि कर।।

-गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी

श्री गणधरदेव एवं सप्तविध मुनि स्तुति
(प्रतिष्ठातिलक से)

ये सर्वतीर्थप्रभवा गणेंद्राः, सप्तर्धयो ज्ञानचतुष्टयाढ्याः।
तेषां पदाब्जानि जगद्धितानां, वचोमनोमूर्द्धसु धारयामः[1]।।1।।

तपोबलाक्षीणरसौषधर्द्धीन्, विज्ञानऋद्धीनपि विक्रियर्द्धीन्।
सप्तर्द्धियुक्तानखिलानृषींद्रान्स्मरामि वंदे प्रणमामि नित्यम्।।2।।

सर्वेषु तीर्थेषु तदंतरेषु, सप्तर्षयो ये महिता बभूवुः।
भवांबुधेः पारमिताः कृतार्थाः, भवंतु नस्ते मुनयः प्रसिद्धाः।।3।।

ये केवलींद्राः श्रुतकेवलींद्रा, ये शिक्षकास्तूर्यतृतीयबोधाः।
सविक्रिया ये वरवादिनश्च, सप्तर्षिसंज्ञानिह तान्प्रवंदे।।4।।

प्रमत्तमुख्येषु पदेषु सार्ध-द्वीपद्वये ये युगपद्भवन्ति।
उत्कर्षतस्ताननवकोटिसंख्यान्, वंदे त्रिसंख्यारहितान्मुनींद्रान्।।5।।

सात शतक मुनि वंदना

हस्तिनापुरि में श्री अकंपनाचार्य आदि मुनिगण आये।
बलि ने उपसर्ग किया इन पर तब विष्णु कुमार मुनि आये।।
इन सात शतक मुनियों का मुनि उपसर्ग दूर कर हर्षाये।
आचार्य प्रवर को सब मुनिवर को नमन करें हम गुण गायें।।1।।

-गणिनी ज्ञानमती

१. प्रतिष्ठातिलक (वीर ज्ञानोदयमाला से प्रकाशित), पृ. २९०

अड़तालिस पूजा मंत्र

(प्रतिष्ठातिलक से)

ॐ णमो अरहंताणं। णमो जिणाणं इत्यादि में ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः अ सि आ उ सा झ्रौं झ्रौं स्वाहा लगाकर बोलें। ये 48 गणधरवलय मंत्र आगे लिखे प्रकार है–

1. ॐ णमो अरहंताणं णमो जिणाणं ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असि आ उसा झ्रौं झ्रौं स्वाहा।
2. ॐ णमो ओहिजिणाणं ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असि आ उसा झ्रौं झ्रौं स्वाहा।
3. ॐ णमो परमोहिजिणाणं ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असि आ उसा झ्रौं झ्रौं स्वाहा।
4. ॐ णमो सव्वोहिजिणाणं ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असि आ उसा झ्रौं झ्रौं स्वाहा।
5. ॐ णमो अणंतोहिजिणाणं ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असि आ उसा झ्रौं झ्रौं स्वाहा।
6. ॐ णमो कोट्ठबुद्धीणं ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असि आ उसा झ्रौं झ्रौं स्वाहा।
7. ॐ णमो बीजबुद्धीणं ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असि आ उसा झ्रौं झ्रौं स्वाहा।
8. ॐ णमो पदाणुसारीणं ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असि आ उसा झ्रौं झ्रौं स्वाहा।
9. ॐ णमो संभिण्णसोदाराणं ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असि आ उसा झ्रौं झ्रौं स्वाहा।
10. ॐ णमो सयंबुद्धाणं ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असि आ उसा झ्रौं झ्रौं स्वाहा।
11. ॐ णमो पत्तेयबुद्धाणं ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असि आ उसा झ्रौं झ्रौं स्वाहा।
12. ॐ णमो बोहियबुद्धाणं ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असि आ उसा झ्रौं झ्रौं स्वाहा।
13. ॐ णमो रुजुमदीणं ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असि आ उसा झ्रौं झ्रौं स्वाहा।
14. ॐ णमो विउलमदीणं ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असि आ उसा झ्रौं झ्रौं स्वाहा।
15. ॐ णमो दसपुव्वीणं ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असि आ उसा झ्रौं झ्रौं स्वाहा।
16. ॐ णमो चउद्दसपुव्वीणं ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असि आ उसा झ्रौं झ्रौं स्वाहा।
17. ॐ णमो अट्ठंगमहाणिमित्तकुसलाणं ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असि आ उसा झ्रौं झ्रौं स्वाहा।
18. ॐ णमो विउव्वइड्ढिपत्ताणं ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असि आ उसा झ्रौं झ्रौं स्वाहा।
19. ॐ णमो विज्जाहराणं ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असि आ उसा झ्रौं झ्रौं स्वाहा।
20. ॐ णमो चारणाणं ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असि आ उसा झ्रौं झ्रौं स्वाहा।
21. ॐ णमो पण्णसमणाणं ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असि आ उसा झ्रौं झ्रौं स्वाहा।
22. ॐ णमो आगासगामिणं ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असि आ उसा झ्रौं झ्रौं स्वाहा।

23. ॐ णमो आसीविसाणं ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असि आ उसा झ्रौं झ्रौं स्वाहा।
24. ॐ णमो दिट्ठिविसाणं ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असि आ उसा झ्रौं झ्रौं स्वाहा।
25. ॐ णमो उग्गतवाणं ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असि आ उसा झ्रौं झ्रौं स्वाहा।
26. ॐ णमो दित्ततवाणं ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असि आ उसा झ्रौं झ्रौं स्वाहा।
27. ॐ णमो तत्ततवाणं ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असि आ उसा झ्रौं झ्रौं स्वाहा।
28. ॐ णमो महातवाणं ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असि आ उसा झ्रौं झ्रौं स्वाहा।
29. ॐ णमो घोरतवाणं ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असि आ उसा झ्रौं झ्रौं स्वाहा।
30. ॐ णमो घोरगुणाणं ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असि आ उसा झ्रौं झ्रौं स्वाहा।
31. ॐ णमो घोरपरक्कमाणं ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असि आ उसा झ्रौं झ्रौं स्वाहा।
32. ॐ णमो घोरगुणबह्मचारीणं ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असि आ उसा झ्रौं झ्रौं स्वाहा।
33. ॐ णमो आमोसहिपत्ताणं ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असि आ उसा झ्रौं झ्रौं स्वाहा।
34. ॐ णमो खेल्लोसहिपत्ताणं ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असि आ उसा झ्रौं झ्रौं स्वाहा।
35. ॐ णमो जल्लोसहिपत्ताणं ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असि आ उसा झ्रौं झ्रौं स्वाहा।
36. ॐ णमो विप्पोसहिपत्ताणं ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असि आ उसा झ्रौं झ्रौं स्वाहा।
37. ॐ णमो सव्वोसहिपत्ताणं ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असि आ उसा झ्रौं झ्रौं स्वाहा।
38. ॐ णमो मणबलीणं ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असि आ उसा झ्रौं झ्रौं स्वाहा।
39. ॐ णमो वचिबलीणं ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असि आ उसा झ्रौं झ्रौं स्वाहा।
40. ॐ णमो कायबलीणं ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असि आ उसा झ्रौं झ्रौं स्वाहा।
41. ॐ णमो खीरसवीणं ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असि आ उसा झ्रौं झ्रौं स्वाहा।
42. ॐ णमो सप्पिसवीणं ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असि आ उसा झ्रौं झ्रौं स्वाहा।
43. ॐ णमो महुरसवीणं ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असि आ उसा झ्रौं झ्रौं स्वाहा।
44. ॐ णमो अमियसवीणं ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असि आ उसा झ्रौं झ्रौं स्वाहा।
45. ॐ णमो अक्खीणमहाणसाणं ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असि आ उसा झ्रौं झ्रौं स्वाहा।
46. ॐ णमो वड्ढमाणाणं ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असि आ उसा झ्रौं झ्रौं स्वाहा।
47. ॐ णमो लोए सव्वसिद्धायदणाणं ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असि आ उसा झ्रौं झ्रौं स्वाहा।
48. ॐ णमो भयवदो महतिमहावीरवड्ढमाणाणं बुद्धिरिसीणं ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असि आ उसा झ्रौं झ्रौं स्वाहा।[1]

१. प्रतिष्ठातिलक (वीर ज्ञानोदयमाला से प्रकाशित), पृ. ३२९ से ३३१ तक।

गणधरवलय स्तुतिः

-गणिनी आर्यिका ज्ञानमती

(अनुष्टुप् छंद)

जिनेभ्यः सर्वसिद्धेभ्यः, नमो देशजिनाश्च ये।
सूरिपाठकयोगीन्द्रा-स्तेभ्योऽपि सततं नमः।।1।।

देशावधिजिनाः सर्वा–वधिश्रेष्ठर्द्धिभूषिताः।
परमावधियुक्ताश्च, सर्वेभ्यो मे नमो नमः।।2।।

अनंतावधियुक्तेभ्यः, केवलिभ्यो नमो नमः।
सर्वर्द्धिभूषितेभ्यश्चा-नंतसौख्यं दिशंतु मे।।3।।

कोष्ठबुद्धियुताः ऋद्धि-धराः सर्वे मुनीश्वराः।
तेभ्यो नमो नमः संतु, मम बुद्धिविशुद्धये।।4।।

बीजबुद्धियुतान् साधून्, सम्पूर्णश्रुतधारकान्।
वंदे बीजर्द्धिसंप्राप्त्यै, सर्वान् गणधरान् गुरून्।।5।।

पदानुसारिबुद्धिभ्यो, युतांस्त्रिभेदभूषितान्।
ऋद्धिप्राप्तयतीन् वंदे, नित्यं सर्वार्थसिद्धये।।6।।

अक्षरानक्षराभाषाः, संख्याताः श्रृणुयुःसकृत्।
तेभ्यः संभिन्नश्रोतृर्द्धि–संयतेभ्यो नमो नमः।।7।।

स्वयंबुद्धमुनीन्द्राश्च, प्रत्येकबुद्धसंयताः।
बोधितबुद्धयोगीशास्तेभ्यश्च त्रिविधं नमः।।8।।

ऋजुमतिधरान् वंदे, विपुलमतिसंयुतान्।
मनःपर्ययबोधर्द्धि-भूषितांश्च स्तवीम्यहं।।9।।

दशपूर्वज्ञयोगीशान्, चतुर्दशसुपूर्वगान्।
श्रुतपारगसर्वांश्च, स्तौमि पूर्णश्रुताप्तये।।10।।

नौम्यष्टांगनिमित्तज्ञान्, महाकुशलयोगिनः।
कुशलाकुशलज्ञांश्च, संतु मे कुशलाप्तये।।11।।

अणिमामहिमाद्यैर्ये, विक्रियर्द्धियुताश्च तान्।
नमामि स्वात्मलाभाय, भवदुःखविहानये।।12।।

तपोभिःसिद्धविद्याभिर्युता विद्याधरर्षयः।।
विद्यानुवादपूर्वज्ञास्तेभ्यो नित्यं नमोऽस्तु मे।।13।।

जंघाकाशजलाद्यष्ट-चारणर्द्धिविभूषिताः।
तेभ्यो नमोऽस्तु साधुभ्यः, ऋद्धिं सिद्धिं दिशंतु मे।।14।।

प्रज्ञाश्रमणयोगीन्द्राः, चतुःप्रज्ञायुता सदा।
नमस्तेभ्यो गणेशेभ्यो, मम प्रज्ञाविशुद्धये।।15।।

आकाशगामिनो नित्यं, तपोमाहात्म्यतः स्वयं।
तेभ्यो नमोस्तु मे कुर्यु-रूर्ध्वगतिमनश्वरीं।।16।।

आशीर्विषान् मुनीन् वंदे, रागद्वेषविवर्जितान्।
दृष्टिविषांश्च तान् साधू–नृद्धिप्राप्तान् सदा स्तुवे।।17।।

उग्रतपोयुतान् साधून्, महोग्रोग्रोपवासिनः।
तपःऋद्ध्या महांतस्तान्, नौमि तपःप्रवृद्धये।।18।।

दीप्ततपोमहर्द्ध्या ये, तनुदीप्त्या च वर्धिताः।
निराहारा जगत्पूज्यास्तान् नमामि स्वसिद्धये।।19।।

तप्ततपोयुतान् साधून्, नत्वाभ्यंतरशुद्धये।
महातपोयुतान् वंदे, तान् सर्वर्द्ध्या समन्वितान्।।20।।

तीव्रघोरतपोयुक्तान्, कायक्लेशादिभिर्युतान्।
निर्भीकान् मुक्तिकामांस्तान्, तपःसिद्ध्यै नमाम्यहं।।21।।

नमो घोरगुणर्द्धिभ्यो, जिनेभ्यः तद्गुणाप्तये।
चतुरशीतिलक्षैश्च गुणैर्युक्तान् स्तुवे मुदा।।22।।

घोरपराक्रमैर्युक्तान्, तपःऋद्ध्या विभूषितान्।
नमामि घोरकर्मारि-हानये स्वात्मसिद्धये।।23।।

घोरगुणयुता ब्रह्म–चारिणः ऋद्धिशालिनः।
सर्वोपद्रवनाशाय, तान् मुनीन् संस्तवीम्यहं।।24।।

येषां संस्पर्शनान् सर्वे, रोगा नश्यंति देहिनां।
आमर्षौषधियुक्तांस्तान् वंदे सर्वार्त्तिहानये।।25।।

येषां क्ष्वेलमलाद्याः स्युः रोगापनयने क्षमाः।
संयतांस्तान् प्रवंदेहं, क्ष्वेलौषधियुतान् गुरून्।।26।।

येषां स्वेदरजोलग्नाः, मला रोगान् नुदंति तान्।
वंदे जल्लौषधिप्राप्तान्, भवव्याधिविहानये।।27।।

येषां उच्चारमूत्राद्याः, सर्वरोगापहारिणः।
विप्रुषौषधियुक्तांस्तान्, वंदे सर्वार्त्तिशांतये।।28।।

ये सर्वौषधिसंप्राप्ताः, सर्वजीवोपकारिणः।
सर्वव्याधिविनाशाय, तेभ्यो नित्यं नमो नमः।।29।।

मुहूर्तमात्रकालेन, द्वादशांगश्रुतं मुदा।
चिंतयंति नमाम्येतान्, मनोबलयुतानृषीन्।।30।।

मुहूर्तमात्रकालेन, द्वादशांगं पठंति ये।
उच्चैःस्वरैर्न खिद्यंते, तान् वचोबलिनः स्तुवे।।31।।

तपोमाहात्म्यतः लोकं, समुद्धर्त्तुं क्षमाश्च ये।
कायशक्तियुतान् नौमि, कायबलिमुनीश्वरान्।।32।।

करपात्रगतं येषां, विषं दुग्धं भवेत् सदा।
क्षीरवत्वचनं चापि, तान् क्षीरस्रविणः स्तुवे।।33।।

येषां तपःप्रभावेण, नीरसं करपात्रगं।
घृतं जायेत तत्सर्वं, तान् सर्पिःस्रविणः स्तुवे।।34।।

येषां हस्तगताहारं, जायते मधुरं तथा।
वाचोऽपि यांति माधुर्यं, तान् मधुस्रविणः स्तुवे।।35।।

करपात्रगतं येषा-माहारममृतं भवेत्।
पीयूषं वचनं चापि, तान् सुधास्रविणः स्तुवे।।36।।

येषामाहारमन्वन्न-मक्षीणं तद्दिनं तथा।
अक्षीणा वसतिर्भूयात्, तानक्षीणर्द्धिगान् स्तुवे।।37।।

वर्धमानगुणैर्युक्तान्, वर्द्धमानजिनान् स्तुवे।
ऋद्धिसिद्धिसमेतान् तान्, ऋद्धिसिद्धिप्रवृद्धये।।38।।

लोके सर्वनिषद्याः स्युः, जिनबिम्बजिनालयान्।
चंपापावादिक्षेत्रं च, सर्वान् सिद्धालयान् स्तुवे।।39।।

श्रीभगवन्महावीरं, महांतं नौम्यहं सदा।
वर्धमानं सुबुद्धर्षिं, वंदे सर्वार्थसिद्धये।।40।।

इत्थं गणधरेशानां, मंत्रान् पठति यो मुदा।
स प्राप्नोत्यचिरं सिद्धि-मर्हज्ज्ञानमतिं ध्रुवाम्।।41।।

।।इति गणधरवलयस्तुतिः।।

दिगम्बर मुनि भगवान हैं

भिक्खं वक्कं हिययं सोधिय जो चरदि णिच्च सो साहू।
एसो सुट्ठिद साहू भणिओ जिणसासणो भयवं।।

जो साधु नित्य ही आहार, वचन और मन का शोधन करके चारित्र का पालन करते हैं, वे सर्वगुण सम्पन्न हैं। जिनशासन में उन्हें भगवान कहा है।

भावार्थ—जो दिगम्बर मुनि आगम के अनुसार 46 दोष और 32 अन्तराय टाल कर निर्दोष आहार ग्रहण करते हैं, भाषा-समिति के अनुसार हित-मित और प्रिय पथ्य वचन बोलते हैं तथा दुर्ध्यान को, क्रोधादि कषायों को दूर करके मन को सदा धर्मध्यान में लगाते हैं, वे ही साधु भिक्षा, वाक्य और मन की शुद्धि करने वाले हैं। वे मोक्षमार्ग में स्थित हैं, सर्वगुणों से समन्वित हैं। अतः ऐसे वे निर्ग्रंथ साधु ही इस संसार में चलते-फिरते भगवान माने गये हैं। ऐसा जिनागम का कथन है।

(श्री कुंदकुंददेव कृत मूलाचार)

श्री गौतमस्वामी स्तोत्र

(श्री जिनसेनाचार्य विरचित)

त्वां प्रत्यक्षविदां बोधैरप्यबुद्धमहोदयम्।
प्रत्यक्षस्तवनैः स्तोतुं वयं चाद्य किलोद्यताः[1]।।1।।

चतुर्दशमहाविद्यास्थानाकूपारपारगम् ।
त्वामृषे! स्तोतुकामाः स्मः केवलं भक्तिचोदिताः।।2।।

भगवन् भव्यसार्थस्य नेतुस्तव शिवाकरम्।
पताकेवोच्छ्रिता भाति कीर्तिरेषा विधूज्ज्वला।।3।।

आलवालीकृताम्भोधिवलया कीर्तिवल्लरी।
जगन्नाडीतरोरग्रमाक्रामति तवोच्छिखा।।4।।

त्वामामनन्ति मुनयो योगिनामधियोगिनम्।
त्वां गण्यं गणनातीतगुणं गणधरं विदुः।।5।।

-श्लोकार्थ-

हे स्वामिन्! यद्यपि प्रत्यक्ष ज्ञान के धारक बड़े-बड़े मुनि भी अपने ज्ञान द्वारा आपके अभ्युदय को नहीं जान सके हैं तथापि हम लोग प्रत्यक्ष स्तोत्रों के द्वारा आपकी स्तुति करने के लिए तत्पर हुए हैं सो यह एक आश्चर्य की ही बात है।।1।। हे ऋषे! आप चौदह महाविद्या (चौदह पूर्व) रूपी सागर के पारगामी हैं अतः हम लोग मात्र भक्ति से प्रेरित होकर ही आपकी स्तुति करना चाहते हैं।।2।। हे भगवन्! आप भव्य जीवों को मोक्षस्थान की प्राप्ति कराने वाले हैं, आपकी चन्द्रमा के समान उज्ज्वल कीर्ति फहराती हुई पताका के समान शोभायमान हो रही है।।3।। हे देव! चारों ओर फैले हुए समुद्र को जिसने अपना आलबाल (क्यारी) बनाया है ऐसी बढ़ती हुई आपकी यह कीर्तिरूपी लता इस समय त्रसनाड़ीरूपी वृक्ष के अग्रभाग पर आक्रमण कर रही है-उस पर आरूढ़ हुआ चाहती है।।4।। हे नाथ! बड़े-बड़े मुनि भी यह मानते हैं कि आप योगियों में महायोगी हैं, प्रसिद्ध हैं, असंख्यात गुणों के धारक हैं तथा संघ के अधिपति-गणधर हैं।।5।। उत्कृष्ट वाणी को गौतम

१. आदिपुराण पर्व-२, पृ. ३३ से ३६ तक। श्लोक ४७ से ७६ तक।

गोतमा गौ प्रकृष्टा स्यात् सा च सर्वज्ञभारती।
तां वेत्सि तामधीषे च त्वमतो गौतमो मतः।।6।।

गोतमादागतो देवः स्वर्गाग्राद् गौतमो मतः।
तेन प्रोक्तमधीयानस्त्वं चासौ गौतमश्रुतिः।।7।।

इन्द्रेण प्राप्तपूजर्द्धिरिन्द्रभूतिस्त्वमिष्यसे।
साक्षात् सर्वज्ञपुत्रस्त्वमाप्तसंज्ञानकण्ठिकः।।8।।

चतुर्भिश्चामलैर्बोधैरबुद्धस्त्वं जगद् यतः।
प्रज्ञापारमितं बुद्धं त्वां निराहुरतो बुधाः।।9।।

पारेतमः परं ज्योतिस्त्वामदृष्ट्वा दुरासदम्।
ज्योतिर्मयः प्रदीपोऽसि त्वं तस्याभिप्रकाशनात्।।10।।

कहते हैं और वह उत्कृष्ट वाणी सर्वज्ञ-तीर्थंकर की दिव्यध्वनि ही हो सकती है उसे आप जानते हैं अथवा उसका अध्ययन करते हैं इसलिए आप गौतम माने गये हैं अर्थात् आपका यह नाम सार्थक है (श्रेष्ठा गौः, गोतमा, तामधीते वेद वा गौतमः 'तदधीते वेद वा' इत्यण्प्रत्ययः।।6।। अथवा यों समझिए कि भगवान वर्धमान स्वामी, गोतम अर्थात् उत्तम सोलहवें स्वर्ग से अवतीर्ण हुए हैं इसलिए वर्धमान स्वामी को गौतम कहते हैं इन गौतम अर्थात् वर्धमान स्वामी द्वारा कही हुई दिव्यध्वनि को आप पढ़ते हैं, जानते हैं, इसलिए लोग आपको गौतम कहते हैं। (गौतमादागतः गौतमः 'तत आगतः' इत्यण् , गौतमेन प्रोक्तमिति गौतमम् , गौतमम् अधीते वेद वा गौतमः)।।7।। आपने इन्द्र के द्वारा की हुई अर्चारूपी विभूति को प्राप्त किया है इसलिए आप इन्द्रभूति कहलाते हैं। तथा आपको सम्यग्ज्ञानरूपी कण्ठाभरण प्राप्त हुआ है अतः आप सर्वज्ञदेव श्री वर्धमान स्वामी के साक्षात् पुत्र के समान हैं।।8।। हे देव! आपने अपने चार निर्मल ज्ञानों के द्वारा समस्त संसार को जान लिया है तथा आप बुद्धि के पार को प्राप्त हुए हैं इसलिए विद्वान् लोग आपको बुद्ध कहते हैं।।9।। हे देव! आपको बिना देखे अज्ञानान्धकार से परे रहने वाली केवलज्ञानरूपी उत्कृष्ट ज्योति का प्राप्त होना अत्यन्त कठिन है, आप उस ज्योति के प्रकाश होने से ज्योतिस्वरूप अनोखे दीपक हैं।।10।। हे स्वामिन्! श्रुतदेवता के द्वारा स्त्री रूप

श्रुतदेव्याहितस्त्रैणप्रयत्रा बोधदीपिका।
तवैषा प्रज्वलत्युच्चैर्द्योतयन्ती जगद्गृहम्।।11।।
तव वाक्प्रकरो दिव्यो विधुन्वन् जगतां तमः।
प्रकाशयति सन्मार्गं रवेरिव करोत्करः।।12।।
तव लोकातिगा प्रज्ञा विद्यानां पारदृश्वरी।
श्रुतस्कन्धमहासिन्धोरभजद् यानपात्रताम्।।13।।
त्वयावतारिता तुङ्गान्महावीरहिमाचलात्।
श्रुतामरसरित्पुण्या निर्धुनानाखिलं रजः।।14।।
प्रत्यक्षश्च परोक्षश्च द्विधा ते ज्ञानपर्ययः।
केवलं केवलिन्येकस्ततस्त्वं श्रुतकेवली।।15।।
पारेतमः परंधाम प्रवेष्टुमनसो वयम्।
तद्द्वारोद्घाटनं बीजं त्वामुपास्य लभेमहि।।16।।
ब्रह्मोद्या निखिला विद्यास्त्वं हि ब्रह्मसुतो मुनिः।
परं ब्रह्म त्वदायत्तमतो ब्रह्मविदो विदुः।।17।।

को धारण करने वाली आपकी सम्यग्ज्ञानरूपी दीपिका जगत्रूपी घर को प्रकाशित करती हुई अत्यन्त शोभायमान हो रही है।।11।। आपके दिव्य वचनों का समूह लोगों के मिथ्यात्वरूपी अन्धकार को नष्ट करता हुआ सूर्य की किरणों के समूह के समान समीचीन मार्ग का प्रकाश करता है।।12।। हे देव! आपकी यह प्रज्ञा लोक में सबसे चढ़ी-बढ़ी है, समस्त विद्याओं में पारंगत है और द्वादशांगरूपी समुद्र में जहाजपने को प्राप्त है-अर्थात् जहाज का काम देती है।।13।। हे देव! आपने अत्यन्त ऊँचे वर्धमान- स्वामीरूप हिमालय से उस श्रुतज्ञानरूपी गङ्गा नदी का अवतरण कराया है जो कि स्वयं पवित्र है और समस्त पापरूपी रज को धोने वाली है।।14।। हे देव! केवली भगवान् में मात्र एक केवलज्ञान ही होता है और आप में प्रत्यक्ष-परोक्ष के भेद से दो प्रकार का ज्ञान विद्यमान है इसलिए आप श्रुतकेवली कहलाते हैं।।15।। हे देव! हम लोग मोह अथवा अज्ञानान्धकार से रहित मोक्षरूपी परम धाम में प्रवेश करना चाहते हैं अतः आपकी उपासना कर आपसे उसका द्वार उघाड़ने का कारण प्राप्त करना चाहते हैं।।16।। हे देव! आप सर्वज्ञदेव के द्वारा कही हुई समस्त

मुनयो वातरशनाः पदमूर्ध्वं विधित्सवः।
त्वां मूर्द्धवन्दिनो भूत्वा तदुपायमुपासते।।18।।
महायोगिन् नमस्तुभ्यं महाप्रज्ञ नमोऽस्तु ते।
नमो महात्मने तुभ्यं नमः स्तात्ते महर्द्धये।।19।।
नमोऽवधिजुषे तुभ्यं नमो देशावधित्विषे।
परमावधये तुभ्यं नमः सर्वावधिस्पृशे।।20।।
कोष्ठबुद्धे नमस्तुभ्यं नमस्ते बीजबुद्धये।
पदानुसारिन् संभिन्नश्रोतस्तुभ्यं नमो नमः।।21।।

विद्याओं को जानते हैं, इसलिए आप ब्रह्मसुत कहलाते हैं तथा परंब्रह्मरूप सिद्ध पद की प्राप्ति होना आपके अधीन है, ऐसा ब्रह्म का स्वरूप जानने वाले योगीश्वर भी कहते हैं।।17।। हे देव! जो दिगम्बर मुनि मोक्ष प्राप्त करने के अभिलाषी हैं वे आपको मस्तक झुकाकर नमस्कार करते हुए उसके उपायभूत-सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान और सम्यक्चारित्र की उपासना करते हैं।।18।। हे देव! आप महायोगी हैं-ध्यानी हैं अतः आपको नमस्कार हो, आप महाबुद्धिमान हैं अतः आपको नमस्कार हो, आप महात्मा हैं अतः आपको नमस्कार हो, आप जगत्त्रय के रक्षक और बड़ी-बड़ी ऋद्धियों के धारक हैं अतः आपको नमस्कार हो।।19।। हे देव! आप देशावधि, परमावधि और सर्वावधिरूप अवधिज्ञान को धारण करने वाले हैं अतः आपको नमस्कार हो।।20।। हे देव! आप कोष्ठबुद्धि नामक ऋद्धि को धारण करने वाले हैं अर्थात् जिस प्रकार कोठे में अनेक प्रकार के धान्य भरे रहते हैं उसी प्रकार आपके हृदय में भी अनेक पदार्थों का ज्ञान भरा हुआ है, अतः आपको नमस्कार हो। आप बीजबुद्धि नामक ऋद्धि से सहित हैं अर्थात् जिस प्रकार उत्तम जमीन में बोया हुआ एक भी बीज अनेक फल उत्पन्न कर देता है उसी प्रकार आप भी आगम के बीजरूप एक दो पदों को ग्रहण कर अनेक प्रकार के ज्ञान को प्रकट कर देते हैं इसलिए आपको नमस्कार हो। आप पदानुसारी ऋद्धि को धारण करने वाले हैं अर्थात् आगम के आदि, मध्य, अन्त की अथवा जहाँ-कहीं से भी एक पद को सुनकर भी समस्त आगम को जान लेते हैं अतः आपको नमस्कार हो। आप संभिन्नश्रोतृ ऋद्धि को धारण करने वाले हैं अर्थात् आप नौ योजन चौड़े और बारह योजन

नमोऽस्त्वृजुमते तुभ्यं नमस्ते विपुलात्मने।
नमः प्रत्येकबुद्धाय स्वयंबुद्धाय वै नमः।।22।।
अभिन्नदशपूर्वित्वात् प्राप्तपूजाय ते नमः।
नमस्ते पूर्वविद्यानां विश्वासां पारदृश्वने।।23।।
दीप्तोग्रतपसे तुभ्यं नमस्तप्तमहातपः।
नमो घोरगुणब्रह्मचारिणे घोरतेजसे।।24।।
नमस्ते विक्रियर्द्धीनामष्टधा सिद्धिमीयुषे।
आमर्ष-क्ष्वेलवाग्विप्रुड्जल्लसर्वौषधे नमः।।25।।

लम्बे क्षेत्र में फैले हुए चक्रवर्ती के कटकसम्बन्धी समस्त मनुष्य और तिर्यञ्चों के अक्षरात्मक तथा अनक्षरात्मक मिले हुए शब्दों को एक साथ ग्रहण कर सकते हैं अतः आपको बार-बार नमस्कार हो।।21।। आप ऋजुमति और विपुलमति नामक दोनों प्रकार के मनःपर्ययज्ञान से सहित हैं अतः आपको नमस्कार हो। आप प्रत्येकबुद्ध हैं इसलिए आपको नमस्कार हो तथा आप स्वयंबुद्ध हैं इसलिए आपको नमस्कार हो।।22।। हे स्वामिन्! दशपूर्वों का पूर्ण ज्ञान होने से आप जगत् में पूज्यता को प्राप्त हुए हैं अतः आपको नमस्कार हो, इसके सिवाय आप समस्त पूर्व विद्याओं के पारगामी हैं अतः आपको नमस्कार हो।।23।। हे नाथ! आप पक्षोपवास, मासोपवास आदि कठिन तपस्याएँ करते हैं, आतापनादि योग लगाकर दीर्घकाल तक कठिन-कठिन तप तपते हैं। अनेक गुणों से सहित अखण्ड ब्रह्मचर्य का पालन करते हैं और अत्यन्त तेजस्वी हैं अतः आपको नमस्कार हो।।24।। हे देव! आप अणिमा, महिमा, गरिमा, लघिमा, प्राप्ति, प्राकाम्य, ईशित्व और वशित्व इन आठ विक्रिया ऋद्धियों की सिद्धि को प्राप्त हुए हैं अर्थात् (1) आप अपने शरीर को परमाणु के समान सूक्ष्म कर सकते हैं, (2) मेरु से भी स्थूल बना सकते हैं, (3) अत्यन्त भारी (वजनदार) कर सकते हैं, (4) हलका (कम वजनदार) बना सकते हैं, (5) आप जमीन पर बैठे-बैठे ही मेरु पर्वत की चोटी छू सकते हैं अथवा देवों के आसन कम्पायमान कर सकते हैं, (6) आप अढ़ाई द्वीप में चाहे जहाँ जा सकते हैं अथवा जल में स्थल की तरह स्थल में जल की तरह चल

नमोऽमृतमधुक्षीरसर्पिरास्रविणेऽस्तु ते।
नमो मनोवचःकायबलिनां ते बलीयसे।।26।।
जलजङ्घाफलश्रेणीतन्तुपुष्पाम्बरश्रयात्।
चारणर्द्धिजुषे तुभ्यं नमोऽक्षीणमहर्द्धये।।27।।

सकते हैं, (7) आप चक्रवर्ती के समान विभूति को प्राप्त कर सकते हैं और (8) विरोधी जीवों को भी वश में कर सकते हैं अतः आपको नमस्कार हो। इनके सिवाय हे देव, आप आमर्ष, क्ष्वेल, वाग्विप्रुट, जल्ल और सर्वौषधि आदि ऋद्धियों से सुशोभित हैं।।25।। अर्थात् (1) आपके वमन की वायु समस्त रोगों को नष्ट कर सकती है, (2) आपके मुख से निकले हुए कफ को स्पर्शकर बहने वाली वायु सब रोगों को हर सकती है, (3) आपके मुख से निकली हुई वायु सब रोगों को नष्ट कर सकती है, (4) आपके मल को स्पर्श कर बहती हुई वायु सब रोगों को हर सकती है और (5) आपके शरीर को स्पर्श कर बहती हुई वायु सब रोगों को दूर कर सकती है। इसलिए आपको नमस्कार हो।।26।। हे देव! आप अमृतस्रावणी, मधुस्रावणी, क्षीरस्रावणी और घृतस्रावणी आदि रस ऋद्धियों को धारण करने वाले हैं अर्थात् (1) भोजन में मिला हुआ विष भी आपके प्रभाव से अमृतरूप हो सकता है, (2) भोजन मीठा न होने पर भी आपके प्रभाव से मीठा हो सकता है, (3) आपके निमित्त से भोजनगृह अथवा भोजन में दूध झरने लग सकता है और (4) आपके प्रभाव से भोजनगृह से घी की कमी दूर हो सकती है। अतः आपको नमस्कार हो। इनके सिवाय आप मनोबल, वचनबल और कायबल ऋद्धि से सम्पन्न हैं अर्थात् आप समस्त द्वादशाङ्ग का अन्तर्मुहूर्त में अर्थरूप से चिन्तवन कर सकते हैं, समस्त द्वादशाङ्ग का अन्तर्मुहूर्त में शब्दों द्वारा उच्चारण कर सकते हैं और शरीर सम्बन्धी अतुल्य बल से सहित हैं अतः आपको नमस्कार हो।।27।। हे देव, आप जलचारण, जंघाचारण, फलचारण, श्रेणीचारण, तन्तुचारण, पुष्पचारण और अम्बरचारण आदि चारण ऋद्धियों से युक्त हैं अर्थात् (1) आप जल में भी स्थल के समान चल सकते हैं तथा ऐसा करने पर जलकायिक और जलचर जीवों को आपके द्वारा किसी प्रकार की बाधा नहीं होगी। (2) आप बिना कदम

त्वमेव परमो बन्धुस्त्वमेव परमो गुरुः।
त्वामेव सेवमानानां भवन्ति ज्ञानसंपदः।।28।।
त्वयैय भगवन् विश्वा विहिता धर्मसंहिता।
अत एव नमस्तुभ्यममी कुर्वन्ति योगिनः।।29।।
त्वत्त एव परं श्रेयो मन्यमानास्ततो वयम्।
तव पादाङ्घ्रिपच्छायां त्वय्यास्तिक्यादुपास्महे।।30।।

उठाये ही आकाश में चल सकते हैं। (3) आप वृक्षों में लगे फलों पर से गमन कर सकते हैं और ऐसा करने पर भी वे फल वृक्ष से टूटकर नीचे नहीं गिरेंगे। (4) आप आकाश में श्रेणीबद्ध गमन कर सकते हैं, बीच में आये हुए पर्वत आदि भी आपको नहीं रोक सकते। (5) आप सूत अथवा मकड़ी के जाल के तन्तुओं पर गमन कर सकते हैं पर वे आपके भार से टूटेंगे नहीं। (6) आप पुष्पों पर भी गमन कर सकते हैं परन्तु वे आपके भार से नहीं टूटेंगे और न उसमें रहने वाले जीवों को किसी प्रकार का कष्ट होगा। और (7) इनके सिवाय आप आकाश में भी सर्वत्र गमनागमन कर सकते हैं। इसलिए आपको नमस्कार हो। हे स्वामिन्! आप अक्षीण ऋद्धि के धारक हैं अर्थात् आप जिस भोजनशाला में भोजन कर आवें उसका भोजन चक्रवर्ती के कटक को खिलाने पर भी क्षीण नहीं होगा और आप यदि छोटे से स्थान में भी बैठकर धर्मोपदेश आदि देंगे तो उस स्थान पर समस्त मनुष्य और देव आदि के बैठने पर भी संकीर्णता नहीं होगी। इसलिए आपको नमस्कार हो।।27।। हे नाथ! संसार में आप ही परम हितकारी बन्धु हैं, आप ही परमगुरु हैं और आपकी सेवा करनेवाले पुरुषों को ज्ञानरूपी सम्पत्ति की प्राप्ति होती है।।28।। हे भगवन्! इस संसार में आपने ही समस्त धर्मशास्त्रों का वर्णन किया है अतः वे बड़े-बड़े योगी आपको ही नमस्कार करते हैं।।29।। हे देव! मोक्षरूपी परम कल्याण की प्राप्ति आपसे ही होती है ऐसा मानकर हम लोग आपमें श्रद्धा रखते हुए आपके चरणरूप वृक्षों की छाया का आश्रय लेते हैं।।30।।

श्री गौतमस्वामी स्तोत्र

रचयित्री-गणिनी ज्ञानमती

-अनुष्टुप् छंद-

अर्हत्प्रभुकथितार्थं, ग्रथितं गणनायकैः।
भक्त्याहं शिरसा नौमि, श्रुतज्ञानमहोदधिम्।।1।।
धर्मतीर्थस्य कर्तारं, महावीरजिनं नुमः।
द्वादशांगस्य कर्तारं, नौमि गौतमस्वामिनम्।।2।।
इंद्रभूति गणीन्द्र! त्वं, वीरस्य प्रथमो भवेः।
सप्तर्द्धीश! चतुर्ज्ञान-धारिन् ! त्वां नौम्यहं मुदा।।3।।
मुहुर्मुहुर्नमामि त्वां, वीरप्रभोर्गणीश्वरम्।
वीरदिव्यध्वनेर्हेतुं, गणाधीशं गणीश्वरम्।।4।।
प्रभोर्दिव्यध्वनिं श्रुत्वा, द्वादशांगविधायिने।
ग्रंथकर्त्रे गणीन्द्राय, नमो गौतमस्वामिने।।5।।
श्रीगणधर स्वामिन्! ते, चैत्यभक्त्यादिभारती।
प्रतिक्रमणसूत्राणि, प्राप्य धन्या वयं भुवि।।6।।
पायं पायं गणाधीश-वाणीं तेऽमृतसदृशीम्।
पुष्टास्तुष्टाश्च तृप्ताश्च, जाताः स्वस्था अपि वयं।।7।।
श्री गौतमगणीन्द्रस्य, वाणी ह्यमृतवर्षिणी।
पूर्णां ज्ञानमतीं कुर्यात् , स्यान्नोऽमृतपदाप्तये।।8।।

श्री गौतमस्वामी स्तोत्र

अज्ञात कवि विरचित

श्री इन्द्रभूतिं वसुभूतिपुत्रं, पृथ्वीभवं गौतमगोत्ररत्नं।
स्तुवन्ति देवाः सुरमानवेन्द्राः, स गौतमो यच्छतु वाञ्छितं मे।।1।।

श्री वर्धमानात् समवाप्य दीक्षां, मुहूर्तमात्रेण कृतानि येन।
अङ्गानि पूर्वाणि चतुर्दशानि, स गौतमो यच्छतु वाञ्छितं मे।।2।।

श्रीवीरनाथेन पुरा प्रणीतं, मन्त्रं महानन्दसुखाय यस्य।
ध्यायन्त्यमी सूरिवराः समग्राः, स गौतमो यच्छतु वाञ्छितं मे।।3।।

यस्माभिधानं मुनयोऽपि सर्वे, गृह्णंन्ति भिक्षां भ्रमणस्य काले।
मिष्टान्नपानादिभिः पूर्णकामाः, स गौतमो यच्छतु वाञ्छितं मे।।4।।

अष्टापदाद्रौ गगने स्वशक्त्या, ययौ जिनानां पदवन्दनाय।
निशम्य तीर्थातिशयं सुरेम्यः, स गौतमो यच्छतु वाञ्छितं मे।।5।।

त्रिपञ्चसङ्ख्याशततापसानां, तपः कृशानामपुनर्भवाय।
अक्षीणलब्ध्या परमान्नदाता, स गौतमो यच्छतु वाञ्छितं मे।।6।।

शिवं गते भर्तरि वीरनाथे युगप्रधानत्वमिहेव मत्वा।
पट्टाभिषेको विहितः सुरेन्द्रैः स गौतमो यच्छतु वाञ्छितं मे।।7।।

श्री गौतमस्याष्टकमादरेण प्रमोदकाले मुनिपुङ्गवा ये।
पठन्ति ते सूरिपदं च देवा–नन्दं लभन्ते नितरां क्रमेण।।8।।

श्री गणधरदेव स्तोत्र

(श्री ऋषभदेव के चौरासी गणधर देव स्तोत्र)

रचयित्री-गणिनी ज्ञानमती

दोहा

गणधर गुरु से वंद्य नित, तीर्थंकर वृषभेश।
उन गणधर गुरु को नमूँ, नशते विघ्न अशेष।।

शंभु छंद

श्री ऋषभदेव के तृतिय पुत्र, मां यशस्वती के नंदन हो।
तज पुरिमतालपुर नगर राज्य, मुनि बने जगत अभिनन्दन हो।।
सब ऋद्धि समन्वित गणधर गुरु, हे 'ऋषभसेन' तुमको वंदन।
तुम प्रथम तीर्थकर के पहले, गणधर हम करते नित्य नमन।।1।।
'श्रीकुंभ' गणीश्वर द्वादशगण, के प्रमुख नाथ के गुण गाते।
सब गुणरत्नों से भरित आप, नित आत्म सुधारस आस्वादें।।
सब विघ्न विनाशें भक्तों के, इसलिये भक्ति से हम नमते।
गणधरगुरु की भक्ती से हम, भव भव के दुख से बचते।।2।।

'श्री दृढ़रथ' गणधर ऋषभदेव, के समवसरण के षट्पद हो।
भक्ती से निजपरमानंदामृत, पीते आप तृप्ति युत हो।।
सम्पूर्ण शास्त्र के ज्ञाता हो, फिर भी जिनवर के दास बने।
हम वंदे इन गणधर गुरु को, पूरे हों वांछित कार्य घने।।3।।
'श्री शतधनु' गणधर सप्त ऋद्धि-धारी श्रुत वारिधि पारंगत।
निज शुद्ध बुद्ध परमात्मतत्त्व, ध्याते फिर भी प्रभु गुण में रत।।
उन प्रभु आदीश्वर के गुण को, मैं भी गाऊँ नित भक्ति करूँ।
नित गणधर गुरु के चरण नमूँ, निज सम्यग्दर्शन शुद्ध करूँ।।4।।
श्रीवृषभेश्वर के समवसरण, में कहे 'देवशर्मा' गणधर।
ये भक्त जनों के कष्ट हरें, इनको जो वंदें रुचि धरकर।।
इनसे वंदित प्रभु चरणकमल, उन प्रभु को वंदूँ श्रद्धा से।
श्रीऋषभदेव के गणधर को, जो वंदें छूटें विपदा से।।5।।

'श्रीदेवभाव' गणधर स्वामी, मनपर्ययज्ञानी जगत्राता।
व्यवहार रत्नत्रय के बल से, निश्चय रत्नत्रय को साधा।।
श्रीऋषभदेव सा गुरु पाया, निज ज्ञानज्योति से आलोकित।
उन गुरु के चरणकमल वंदूँ, निज को पाऊँ निज से शोभित।।6।।

'श्रीनन्दन' गणधर गुरु को नित, वंदूँ आनन्दित होकर के।
वे ज्ञानानन्द स्वभावी थे, प्रतिक्षण आत्मा को ध्याकर के।।
वे ऋषभदेव के शिष्य बने, उस भव से ही शिवधाम लिया।
मैं वंदूँ शीश नमाकर के, गुरु के गुरु को भी नमित किया।।7।।

'श्रीसोमदत्त' गणधर गुणधर, सम्पूर्ण परिग्रह के त्यागी।
निज को निज में निज के द्वारा, नित ध्याते निजगुण अनुरागी।।
श्रीऋषभदेव के निकट रहें, अविरत जिनभक्ती में रत थे।
मैं वंदूँ शीश नमा करके, मेरे भव-भव के फंद कटें।।8।।

'श्रीसूरदत्त' गणधर स्वामी, संयतमुनि नग्न दिगम्बर थे।
अट्ठाइस मूलगुणों से युत, बहुविध उत्तर गुणधारी थे।।
ये ऋषभदेव के चरणकमल, में नित नमते उनको वंदूँ।
गणधरगुरु को तीर्थंकर को, वंदत ही पाप अरी खंडूँ।।9।।
श्रीऋषभदेव के सन्निध में, गणधर गुरु 'वायूशर्मा' थे।
सब कर्म धूलि को उड़ा-उड़ा, अगणित गुणयुत शुचिधर्मा थे।।
संयमबल से त्रयविध अवधी, पाकर निरवधि गुण रत्नाकर।
उन गणधर स्वामी को वंदूँ, पा जाऊँ अनवधि सुखसागर।।10।।
'श्रीयशोबाहु' गणधर गुणधर, निजगुण के यश को फैलाया।
जिसमें धर्मामृत भरा हुआ, इस अतुल तीर्थ में नहलाया।।
भाक्तिक जन इसमें नहा नहा, निज पाप मलों को धोते हैं।
उन गणधर स्वामी को नमते, सब वांछित पूरे होते हैं।।11।।
'देवाग्नी' गणधर ने तप बल, से सर्व ऋद्धियाँ पाई थीं।
ध्यानानल में सब कर्म जला, कर सर्वसिद्धियाँ पायी थीं।।
श्रीऋषभदेव के चरणकमल, के भ्रमर बने थे जग त्राता।
उन गणधर गुरु के चरणों को, मैं वंदूँ मिले सर्व साता।।12।।

अडिल्ल छंद

बुद्धि ऋद्धि में अवधि ज्ञान है ऋद्धि जो।
अणु से महास्कंध पर्यंते मूर्त को।।
जाने गणधर 'अग्निदेव' सब ऋद्धियुत।
गणधर गुरु को नित मैं वंदूँ सिद्धिकृत।।13।।

मनुज लोक के भीतर चिंतित वस्तु को।
जाने मूर्तिक द्रव्य मनःपर्यय ज्ञान वो।।
इन ऋद्धीयुत 'अमितगुप्त' गणनाथ को।
गणधर गुरु मन वच तन से नित नमों।।14।।

लोकालोक प्रकाशे केवलज्ञान जो।
सब ऋद्धीयुत पाते जो इस ऋद्धि को।।
उन 'मित्राग्नी' गणधर को मैं नित नमूँ।
श्रीऋषभदेव को वंदूँ निज आतम भजूँ।।15।।

शब्द संख्यातों अर्थ अनंतों से युते।
अनंत लिंगों साथ बीजपद जानते।।
बीजऋद्धि युत भी 'हलभृत' गणनाथ हैं।
उनके गुरु तीर्थंकर त्रिभुवन नाथ हैं।।16।।

शब्दरूप बीजों को मति से जो धरें।
मिश्रण बिन बुद्धी कोठे में जो भरें।।
गणधरदेव 'महीधर' जिनवर भक्त थे।
उनको वंदूँ तीर्थंकर प्रभु दर्शन मिले।।17।।

गुरु उपदेश सुपाय एक पद को ग्रहें।
उसके ऊपर या पहले के पद लहें।।
उभय ग्रहें या त्रयविध पदानुसारिणी।
गुरु 'महेन्द्र' की जिनभक्ती भवहारिणी।।18।।
श्रोत्रेन्द्रिय उत्कृष्ट क्षेत्र के बाहिरे।
अक्षर अनक्षरात्मक वच सुन उत्तरें।।

गुरु 'वसुदेव' संभिन्नश्रोतृ ऋद्धि धरें।
उन्हें नमूँ जो तीर्थंकर गुण उच्चरें।।19।।

रसनेन्द्रिय उत्कृष्ट क्षेत्र के बाह्य जो।
संख्यातों योजन नाना रस स्वाद को।।
जो जाने दूरास्वादन ऋद्धी धरें।
देव 'वसुंधर' जिनभक्ती से भव तरें।।20।।

स्पर्शेन्द्रिय उत्कृष्ट क्षेत्र के बाह्य भी।
संख्यातों योजन स्पर्श को जानहीं।
'अचलगुरु' दूरस्पर्श ऋद्धि आदिक सहित।
उनके गुरु ऋषभेश्वर हैं त्रिभुवन महित।।21।।

घ्राणेन्द्रिय उत्कृष्ट क्षेत्र के बाह्य भी।
संख्यातों योजन सुगंध को जानहीं।।
'मेरू' गणधर दूरघ्राण ऋद्धी धरें।
उन गुरु को नित वंदत हम समसुख भरें।।22।।

कर्णेन्द्रिय उत्कृष्ट विषय के बाहिरे।
संख्यातों योजन मनुष्य पशु अक्षरे।।
पृथक्-पृथक् सुन लेय 'मेरुधन' गणधरा।
उन गुरु को मैं नमूँ सदा वे सुखकरा।।23।।

नेत्रेन्द्रिय उत्कृष्ट क्षेत्र से बाह्य जो।
चक्रवर्ति के नेत्रविषय से अधिक वो।।
दूरदर्शिता ऋद्धि 'मेरुभूती' धरें।
तीर्थंकर के चरणकमल में नति करें।।24।।

नरेन्द्र छंद

रोहिणी प्रभृति महाविद्यायें, पाँच शतक मानी हैं।
लघु विद्या अंगुष्ठप्रसेना प्रभृति सप्तशत ही हैं।।

दशम पूर्व पढ़ने पर च्युत नहिं दशपूर्वित्व कहाते।
गुरु 'सर्वयश' ऋषभेश्वर के गुणयश को नित गाते।।25।।

ग्यारह अंग चतुर्दश पूरब पढ़कर श्रुतकेवलि हों।
ऋद्धि चतुर्दशपूर्वि धरें नित 'सर्वयज्ञ' गणधर वो।।
ऋषभदेव के समवसरण में धर्मध्यान के ध्यानी।
उनको उनके गुरु को वंदूँ बनूँ आत्म श्रद्धानी।।26।।

अभ्र भौम अंग स्वर व्यंजन लक्षण चिन्ह स्वपन हों।
आठ निमित्तों से सब के शुभ अशुभ बताते मुनि जो।।
वे अष्टांगनिमित्त ऋद्धिधर 'सर्वगुप्त' गणधर गुरु।
ऋषभदेव की भक्ती में रत नमूँ नमूँ मैं रुचिधर।।27।।

औत्पत्तिक पारिणामिक विनयिक कही कर्मजा बुद्धी।
प्रज्ञाश्रमण ऋद्धि चउविधधर गणधर गुरु बनते भी।।
नाम 'सर्वप्रिय' ऋषभदेव के शिष्य सर्वजग त्राता।
नमूँ तीर्थकर गुरु गणधर को पाऊँ निजसुख साता।।28।।

गुरु उपदेश बिना कर्मों के, उपशम से तप बल से।
जो प्रत्येक बुद्धि ऋद्धी है, ऋषियों के ही प्रगटे।।
'सर्वदेव' गणधर गुरुवर इस ऋद्धि सहित सुखकारी।
उनके गुरु ऋषभेश्वर को भी वंदूँ भवदुखहारी।।29।।

सब परमत को सुरपति को भी जो कर सकें निरुत्तर।
इन वादित्वऋद्धियुत गणधर को वंदूँ अंजलिकर।।
'सर्वविजय' से वंदित जिनवर चरणकमल शिर नाऊँ।
गणधरगुरु को तीर्थंकर को नमत आत्मसुख पाऊँ।।30।।

अणू बराबर छिद्रों में भी, जो ऋषि घुस कर बैठें।
चक्रवर्ति का कटक बना दें अद्भुत विक्रिय करके।।
ऐसे अणिमा ऋद्धि विभूषित 'विजयगुप्त' गणधर को।
नमूँ इन्हों के गुरु तीर्थंकर नमूँ स्वात्मसुख झट हो।।31।।

मेरु बराबर तनु कर सकते महिमाऋद्धि धरें जो।
विक्रिय ऋद्धी के बल से गुरु पर उपकार करें वो।।
'विजयमित्र' गणधर गुरु इन सब ऋद्धि समन्वित माने।
उनको उनके गुरु को वंदत कर्म कालिमा हाने।।32।।

लघिमा ऋद्धि सहित ऋषि वायू सम हल्का तनु कर सकते।
जन जन के उपकार हेतु ही, ऋद्धि प्रयोगें रुचि से।।
'श्रीविजयिल' गणधर गुरु ऐसे उनके चरण नमूँ मैं।
श्रीऋषभेश्वर को नित वंदूँ आतम सौख्य भरूँ मैं।।33।।

'अपराजित' गणधर प्रभु जग में सदा विजयशाली थे।
अधिक भारयुत वज्रसदृश तनु तप बल से धर सकते।।
गरिमा ऋद्धि सहित को वंदूँ तपमहिमा की गरिमा।
वंदूँ ऋषभदेव तीर्थंकर पाऊँ तप की महिमा।।34।।

भूमी पर बैठे ही बैठे, सूर्य चंद्र छू सकते।
अंगुलि से ही मेरुशिखर, छूकर मस्तक से नमते।।
प्राप्तिनाम विक्रिया सहित 'वसुमित्र' गणाधिप वंदूँ।
तीर्थंकर श्रीआदिनाथ के शिष्यों को अभिनंदूँ।।35।।

भू पर भी जलसम अवगाहे जल में भू सम चलते।
इस प्राकाम्य विक्रिया बल से अद्भुत महिमा धरते।।
'विश्वसेन' गणधर को वंदूँ नाना ऋद्धि सहित जो।
आदिनाथ के चरणकमल के भ्रमर भक्ति तत्पर वो।।36।।

रोला छंद

जग में प्रभुता वृद्धि यह ईशित्व कहावे।
'साधुषेण' के सिद्ध सब जन से यश पावें।।
उन गणधर के नाथ ऋषभदेव तीर्थंकर।
नमूँ भक्ति से नित्य पाऊँ सौख्य निरन्तर।।37।।

सब जन वश में होय, ऋद्धि वशित्व कहावे।
'सत्यदेव' गणदेव, नाना ऋद्धि धरावें।।

इनसे वंदित पाद, ऋषभदेव भगवंता।
करूँ निरन्तर जाप, पाऊँ सौख्य अनंता।।38।।

जिसके बल से शैल, शिला आदि के मधि से।
वृक्ष आदि में छेद, किये बिना ही चलते।।
विक्रिय अप्रतिघात, 'देवसत्य' गुण धरते।
ऋषभदेव के पास, रहें द्विदश गण धरते।।39।।

जिस ऋद्धी से साधु, हों अदृश्य नहिं दिखते।
विक्रिय अंतर्धान, तप बल से ही उपजे।।
'सत्यगुप्त' गणनाथ, बहुविध ऋद्धी धारी।
उन गुरु आदिनाथ, नमूँ सर्वहितकारी।।40।।

एकहि साथ अनेक-रूप बना सकते जो।
कामरूप यह ऋद्धि, तप बल से प्रगटे जो।।
'सत्यमित्र' गणनाथ ऋषभदेव गुण गाते।
नमूँ नमाकर माथ, तीर्थंकर गुण गाके।।41।।

जिस ऋद्धी से साधु, गगन गमन कर सकते।
धरें गगनगामित्व, 'निर्मल' मुनि तपबल से।।
इनके गुरु वृषभेश, उनको भी प्रणमूँ मैं।
रोग, शोक, संक्लेश, सब दुःख दूर करूँ मैं।।42।।

जल में चलते जंतु-घात वहाँ नहिं होवे।
जलचारण यह ऋद्धि, तपश्चरण से होवे।।
'श्रीविनीत' गणधार, नमूँ नमूँ चित लाके।
ऋषभदेव को माथ, नाऊँ भक्ति बढ़ाके।।43।।

चउ अंगुल भू उपरि, चलते अधर गगन में।
जंघाचारण ऋद्धि, धरते समवसरण में।।
'संवर' गणधर देव, उनके गुरु आदीश्वर।
नमत करूँ दुखछेव, पाऊँ सुख क्षेमंकर।।44।।

फल पत्ते अरु फूल, उन पर चरण धरें भी।
चारणकिरिया ऋद्धि, जीवघात नहिं हो भी।।
'मुनीगुप्त' गणनाथ, वंदूँ व्याधि नशाऊँ।
नमूँ नमाकर माथ, ऋषभदेव गुण गाऊँ।।45।।

अग्नि शिखा पर चलें, बाधा रंच न होवे।
धूयें पर भी चले, पग स्खलित न होवें।।
'मुनीदत्त' गणनाथ, अग्निधूम चारण युत।
आदीश्वर के शिष्य, नमूँ नमूँ मैं शिरनत।।46।।

अप्कायिक बध टाल, मेघों पर चल सकते।
जलधारा पर चलें, चारणऋषि बन करके।।
'मुनीयज्ञ' गणदेव, ऋषभदेव को नमते।
हम वंदे कर सेव, नाम मंत्र जप जपके।।47।।

जो मकड़ी के तंतु, पर हल्के पग धरते।
बाधा करें न रंच, चारण ऋद्धी धरते।।
'मुनीदेव' गणनाथ, नमूँ नमूँ नित शिरनत।
नमूँ तीर्थकर नाथ, पाऊँ जिनगुणसंपत्।।48।।

शंभु छंद

जो सूर्य चंद्र ग्रह नखत तारका, किरणों का अवलंबन लें।
बहुतेक योजनों गमन करें, ज्योतिश्चारण क्रिय ऋद्धी लें।।
गुरु 'गुप्तियज्ञ' गणधर बनकर, संपूर्ण ऋद्धि के स्वामी थे।
श्री आदिनाथ के चरण नमें, जो त्रिभुवन अंतर्यामी थे।।49।।
जिस ऋद्धी से मुनि वायु पंक्ति, के आश्रय से नभ में चलते।
स्खलन रहित पग धर धरके, बहुते कोशों तक चल सकते।।
यह वायुचारणा क्रिया ऋद्धि, 'श्रीमित्रयज्ञ' गणधर धरते।
उनके गुरु ऋषभदेव को उनको नमते रोग शोक नशते।।50।।
तप ऋद्धी के हैं सात भेद, उनमें हि उग्र तप पहला है।
एकेक उपवास अधिक, जीवन भर बढ़ता रहता है।।

गणदेव 'स्वयंभू' ने बहुविध, ऋद्धी से आत्मविकास किया।
श्री ऋषभदेव को ध्या ध्याकर, निज केवलज्ञान प्रकाश लिया।।51।।
बेला आदिक उपवास करें, जब ऋद्धि दीप्तमय हो जाती।
आहार न हो बल तेज बढ़े, नहिं होती उन्हें भूख व्याधी।।
यह इस ऋद्धी का ही प्रभाव, तनु में बल माँस रुधिर वृद्धी।
'भगदेव' गणीश्वर वृषभेश्वर, को नमते मिलती सब सिद्धी।।52।।

जिस ऋद्धी से आहार ग्रहें, वह तपे लोह पर जल सदृश।
नीहार न हो मल मूत्र शुक्र, आदिक धातू नहिं बने विविध।।
बस शक्ति बढ़े तप बढ़े सदा, ''भगदत्त'' गणीश्वर को प्रणमूँ।
श्री ऋषभदेव को नित्य नमूँ, भव भव के कर्म कलंक वमूँ।।53।।

जो अणिमादिक चारण आदिक, नाना ऋद्धी से युक्त रहें।
मंदरपंक्ती सिंहनिष्क्रीड़ित, आदिक उत्तम उपवास गहें।।
वो चार ज्ञानधारी ऋषिवर, ही महातपो ऋद्धी धारें।
'भगफल्गू' गणधर के गुरूवर्य, श्री ऋषभदेव भव से तारें।।54।।

अनशन आदिक बारह विध के, तप उग्र उग्र जो करते हैं।
ज्वर आदिक से पीड़ित हो भी, आतापनादि तप धरते हैं।।
'श्रीगुप्तफल्गु' तप ऋद्धिसहित, गणधर गुरु विघ्न विनायक हैं।
उनके गुरु ऋषभदेव जिनवर, वंदत सुख संपति दायक हैं।।55।।

मुनि घोर पराक्रम ऋद्धी से, अतिशायी शक्ती पाते हैं।
त्रिभुवन संहार करण जलधी, शोषण में समरथ होते हैं।।
यद्यपि ये कार्य नहीं करते, जगबन्धू 'मित्रफल्गू' गणधर।
उनके गुरु ऋषभदेव जिनवर, मैं वंदूँ भवभय पातकहर।।56।।

जो अघोर यानी पूर्णशांत, महाव्रत समिती गुप्ती पालें।
वे व्रतमय ब्रह्मा में चरते, अघोर ब्रह्मचर्या पालें।।
इन ऋद्धिसहित 'श्रीप्रजापति' गणधर की भक्ती करने से।
वध रोग कलह दुर्भिक्ष वैर, नशते भगवन् की भक्ती से।।57।।

सब द्वादशांग अंतर्मुहूर्त, में चिंतन करने में समरथ।
जो मनोबली ऋद्धी धारें, वे शुक्ल ध्यान में हों समरथ।।
'श्रीसर्वसंग' गणधर गुरुवर, इन ऋद्धि सहित भवि सुखदाता।
उनको गुरु श्री ऋषभदेव जिनवर, को वंदत मिले सर्व साता।।58।।

श्रुत द्वादशांग उच्चारण कर पढ़ते नहिं कंठ थके उनका।
वह वचनबली ऋद्धी प्रगटे, वे मेटें जग की सर्व व्यथा।।
'श्रीवरुण' गणी को नित प्रणमूँ, उनके गुरु ऋषभदेव वंदूँ।
श्रुतज्ञान पूर्ण करने हेतू, गणधर जिनवर को नित्य नमूँ।।59।।

त्रिभुवन को भी अंगुलि ऊपर, जो उठा सकें वो कायबली।
नाना विध आसन कायक्लेश, करने से हो यह ऋद्धि भली।।
'धनपालक' गणधर को प्रणमूँ, सब ऋद्धि सिद्धि सुख के दाता।
उनके गुरु ऋषभदेव को नित, मैं वंदूँ मिले सौख्य साता।।60।।

पद्धड़ी छंद

औषधि ऋद्धी के आठ भेद, आमर्शौषधि यह ऋद्धि एक।
'मघवान' गणी यह ऋद्धि धरें, इन गुरु को वंदत पाप हरें।।61।।

जो क्ष्वेलौषधि ऋद्धी धरते, वे सर्वरोग संकट हरते।
गुरु 'तेजोराशी' गणधर थे, उन को ऋषभेश्वर को नमते।।62।।

गुरु जल्लौषधि ऋद्धी धरंत, 'महावीर' नाम गणधर महंत।
उनके गुरु वंदूँ आदिनाथ, भवदधि डूबत को देयं हाथ।।63।।

जो मलौषधी धरते महान्, गणईश 'महारथ' भाग्यवान्।
श्री ऋषभदेव के शिष्य मान्य, वंदत ही पावें स्वात्म साम्य।।64।।

ऋषि विप्रुष औषधि ऋद्धि धार, सब के दुख दारिद करें छार।
उनके गुरु ऋषभेश्वर महान्, जो 'विशालाक्ष' गणधर प्रधान।।65।।

जिनसे स्पर्शित नीर वायु, सब रोग हरे करते चिरायु।
सर्वौषधि धरते 'महाबाल', उनको मैं वंदूँ जगत्पाल।।66।।

जिससे कटु या विष व्याप्त अन्न, बस वचन मात्र से निर्विषान्न।
मुखनिर्विष युत 'शुचिसाल' साधु, उन गुरु को मैं वंदूँ अबाध।।67।।
जो रोग विषादि समेत जीव, अवलोकन से हों स्वस्थ जीव।
दृष्टीनिर्विषयुत 'श्रीवज्र' साधु, उन गुरु को नमते स्वात्मस्वादु।।68।।
आशीविष ऋद्धी जो धरंत, दुरआशिष से मरते तुरंत।
श्री 'वज्रसार' न करें प्रयोग, उन गुरु के नमते मिटे शोक।।69।।
दृष्टीविषयुत गणि 'चन्द्रचूल' करुणासागर जग के नुकूल।
उनके गुरु ऋषभेश्वर जिनिंद, मैं नमूँ बनूँ अतिशय अनिंद्य।।70।।
कर में आया रूखा अहार, पयवत् परिणमता स्वाद धार।
श्री 'जयकुमार' गणधर नमंत, उन गुरु को वंदत सुख अनंत।।71।।
कर में आया रुक्षादि अन्न, तप से बन जाता मधुर अन्न।
'महारस' गणधर के गुरु जिनेश, मैं वंदूँ पाऊँ सुख हमेश।।72।

स्रग्विणी छंद

अमृतास्रावि विष वस्तु अमृत करें।
उन वचन दुःखहर कर्ण अमृत भरें।।
'कच्छ' गणधर उन्हीं के नमूँ पाद को।
शिष्य जिनके उन्हें भी नमूँ भाव सों।।73।।

हस्ततल में रखा रुक्ष अन्नादि भी।
दिव्य वच भी अमृतसम करें तुष्टि ही।।
जो 'महाकच्छ' गणधर उन्हों के प्रभू।
मैं नमूँ भक्ति से पाऊँ आनन्द भू।।74।।

'नमि' महासाधु गणधर बने नाथ के।
ऋद्धि अक्षीण भोजन मिली त्याग से।।
चक्रवर्ती कटक जीम लेवे भले।
ना घटे पाद वंदूँ सदा भक्ति ले।।75।।

भू चतुष्कोण हो चार ही धनुष भी।
देव नर भी असंख्ये वहाँ तिष्ठ हीं।।
नाम अक्षीण आलय महाऋद्धि से।
नाथ के शिष्य 'विनमी' नमूँ भक्ति से।।76।।

गीता छंद

'श्रीबल' गणी ऋषभेष के, सब ऋद्धियों के नाथ हैं।
सम्पूर्ण गुण रत्नों भरें फिर भी न कुछ उन पास है।।
जिनदेव के चरणाब्ज षट्पद आत्मसुख में मग्न हैं।
उनको उन्हों के नाथ को वंदत मिले सुख कंद है।।77।।

'अतिबल' गणी ऋषभेश जिन के समवसृति में शोभते।
अठरह सहस शीलों गुणों से आत्मसुख को पोषते।।
प्रभु भक्ति में लवलीन हो निज आत्म का चिंतन करें।
गणधर गणों से वंद्य जिनवर नमत भव भंजन करें।।78।।

'श्रीभद्रबल' चउज्ञानधारी ऋद्धियों से पूर्ण हैं।
उत्तर गुणों से राजते यमदुःख करते चूर्ण हैं।।
ऋषभेश के पदपंकजों की नित्य करते वंदना।
गणधर गुरु को आदिप्रभु को वंदते दुख रंचना।।79।।

'नंदी' गणाधिप नाथ की दिव्यध्वनि सुन मोदते।
द्वादश गणों को द्वादशांगी में सतत संबोधते।।
निज शुद्ध परमानंदमय ज्ञानाब्धि में अवगाहते।
फिर भी जिनेश्वर चरण वंदे हम उन्हें शिर नावते।।80।।

गणधर 'महाभागी' जिनेश्वर पादपंकज ध्यावते।
बहु पुण्य संपादन करें फिर पाप पुण्य नशावते।।
निज में सु परमाल्हाद अमृत पान कर शिव पावते।
उनके गुरु वृषभेश को भी वंदते अति चाव से।।81।।

'श्रीनंदिमित्र' गणेश नित आदीश का वंदन करें।
चौरासी लक्षोत्तर गुणों से पूर्ण भव खण्डन करें।।

संपूर्ण ऋद्धि समेत फिर भी नग्नमुद्रा धारते।
उनको नमूँ जिन को नमूँ फिर तिरूँ भक्ती नाव से।।82।।

'श्रीकामदेव' गणीश नित तीर्थेश की भक्ती करें।
निज भक्त को तारें भवोदधि से स्वयं गुण से तिरें।।
उनके चरण को वंद कर वृषभेश को वंदन करूँ।
निज साम्य अमृत को पिऊँ यमपाश का छेदन करूँ।।83।।

'अनुपम' गणीश्वर सर्व उपमा रहित अनुपम गुण धरें।
संपूर्ण लोक अलोक में निज कीर्ति बल्ली विस्तरें।।
सब ऋद्धि सिद्धि समेत फिर भी आदिजिन के भक्त थे।
हम भी नमें गणधरगुरु जिनराज को अति भक्ति से।।84।।

शंभु छंद

श्री ऋषभदेव के चौरासी गणधर जिनमुद्रा धारी थे।
चौरासि हजार महामुनि के स्वामी अनवधि गुणधारी थे।।
श्रीऋषभसेन आदिक गणपति श्रीऋषभदेव की भक्ति करें।
गणधरगुरु नमुँ तीर्थंकर को वंदत निज आतम पुष्ट करें।।85।।

भक्ति मार्ग सबके लिए श्रेयस्कर है

जस्संतियं धम्मपहं णिगच्छे तस्संतियं वेणयियं पउंजे।
काएण वाचा मणसावि णिच्चं सक्कारए तं सिर पंचमेण।।

जिनके पास मैंने धर्म को प्राप्त किया है उनके निकट मैं विनय का प्रयोग करता हूँ। मन-वचन-काय से शिर झुकाकर पंचांग नमस्कारपूर्वक मैं (गौतम स्वामी) उन वर्धमान स्वामी का सत्कार (नमस्कार) करता हूँ।

और तभी वे श्रावक के लिए कहते हैं कि –

जिणवयणधम्मचेइयपरमेट्ठिजिणालयाणं णिच्चं पि।
जं वंदणं तियालं कीरइ सामायियं तं खु।।

जिनागम, जिनधर्म, जिनप्रतिमा, अरहंत, सिद्ध, आचार्य, उपाध्याय, साधु और जिनमंदिर इन नवों की (नवदेवताओं की) जो नित्य ही त्रिकाल में वंदना करता है, उसके यह सामायिक प्रतिमा नाम का व्रत होता है।

– श्री गौतम स्वामी

श्री गणधरदेव स्तोत्र

(चौबीस तीर्थंकर के 1459 गणधरदेव स्तोत्र)

-गणिनी ज्ञानमती

–गीता छंद–

गणधर बिना तीर्थेश की, वाणी न खिर सकती कभी।
प्रभु पास में दीक्षा ग्रहें, गणधर भि बन सकते वही।।
तीर्थेश की ध्वनि श्रवणकर, उन बीज पद के अर्थ को।
जो ग्रथें द्वादश अंगमय, मैं नमूं उन गणनाथ को।।1।।

श्री ऋषभदेव जिनेन्द्र के, चौरासि गणधर मान्य हैं।
गुरु 'ऋषभसेन' प्रधान इनमें, सर्व रिद्धि निधान हैं।।
द्वादश गणों के नाथ द्वादश, अंग के कर्ता तुम्हीं।
मैं नमूं नितप्रति भक्ति से, गुरुभक्ति भवदधि तारहीं।।2।।

श्री अजितनाथ जिनेन्द्र के, नब्बे गणाधिप मान्य हैं।
'केशरीसेन' प्रधान इनमें, सर्व ऋद्धि निधान हैं।।द्वादश.।।3।।

संभव जिनेश्वर के सु इक सौ, पाँच गणधर ख्यात हैं।
गुरु 'चारुदत्त' प्रधान इनमें, सर्व ऋद्धि सनाथ हैं।।द्वादश.।।4।।

जिन अभिनंदन के गणाधिप, एक सौ त्रय ख्यात हैं।
गुरु 'वज्रचमर' प्रधान इसमें, सर्व ऋद्धि सनाथ हैं।।द्वादश.।।5।।

श्री सुमति जिनके एक सौ, सोलह गणाधिप मान्य हैं।
'श्रीवज्र' गणधर मुख्य इनमें, सर्वऋद्धि खान हैं।।द्वादश.।।6।।

श्रीपद्मप्रभ के एक सौ, ग्यारह गणाधिप ख्यात हैं।
'श्रीचमर' गणधर मुख्य उनमें, सर्वरिद्धि सनाथ हैं।।द्वादश.।।7।।

जिनवर सुपारस के गणीश्वर, ख्यात पंचानवें हैं।
'बलदत्त' गणधर हैं प्रमुख, सब ऋद्धियों से भरे हैं।।द्वादश.।।8।।

श्री चन्द्रप्रभ के गणपती, तेरानवे गणपूज्य हैं।
'वैदर्भ' गणधर प्रमुख उनमें, सर्व ऋद्धी सूर्य हैं।।
द्वादश गणों के नाथ द्वादश, अंग के कर्ता तुम्हीं।
मैं नमूं नितप्रति भक्ति से, गुरुभक्ति भवदधि तारहीं।।9।।

श्री पुष्पदंत जिनेश के, गणधर अठासी मान्य हैं।
'श्रीनाग' मुनि गणधर प्रमुख, सब ऋद्धियों की खान हैं।।द्वादश.।।10।।

शीतल जिनेश्वर के सत्यासी, गणधरा जग वंद्य हैं।
'श्री कुंथु' गणधर प्रमुख इनमें, सर्वरिद्धी कंद हैं।।द्वादश.।।11।।

श्रेयांस जिनके पास सत्तत्तर गणाधिप श्रेष्ठ हैं।
'श्रीधर्मगुरु' गणधर प्रमुख, सब ऋद्धि गुण में ज्येष्ठ हैं।।द्वादश.।।12।।

श्री वासुपूज्य जिनेन्द्र के, छ्यासठ गणाधिप गण धरें।
'मंदर' मुनी गणधर प्रमुख ये, सर्व रिद्धि गुण भरें।।द्वादश.।।13।।

–नरेन्द्र छंद–

विमलनाथ के गणधर पचपन, सब ऋद्धि से पावन।
'जयमुनि' प्रमुख उन्हों में गणधर, भव सागर से तारन।।
ये भव्यों के रोग शोक दुख, दारिद कष्ट निवारें।
नव निधि ऋद्धी यश संपत्ती, देकर भव से तारें।।14।।

श्री अनंत जिनवर के गणधर, हैं पचास गुण आकर।
'श्री अरिष्ट' गणधर प्रमुख्य हैं, ऋद्धि सिद्धि रत्नाकर।।ये.।।15।।

धर्मनाथ के गणधर सब, ऋद्धी से पूर्ण तितालिस।
'श्री अरिष्टसेन' उनमें गुरु, ज्ञानज्योति से भासित।।ये.।।16।।

शांतिनाथ के छत्तिस गणधर, चौंसठ ऋद्धि समन्वित।
'चक्रायुध' गणधर उनमें गुरु, सर्व गुणों से मंडित।।ये.।।17।।

कुंथुनाथ के पैंतिस गणधर, शिवपथ विघ्न विनाशें।
प्रमुख 'स्वयंभू' गणधर उनमें, भविमन कुमुद विकासें।।ये.।।18।।

अर जिनवर के तीस गणाधिप, सर्वऋद्धि के धारी।
'कुंभ' प्रमुख हैं गणधर सबमें, परमानंद सुखकारी।।ये.।।19।।

मल्लिनाथ के अट्ठाइस गणनायक गुणमणि धारें।
'श्री विशाख' गणधर गुरु उनमें, भक्त विघन परिहारें।।ये.।।20।।

मुनिसुव्रत के अठरह गणधर, व्रत गुण शील समन्वित।
'मल्लि' प्रमुख हैं गणधर उनमें, सब श्रुत ज्ञान समन्वित।।ये.।।21।।

नमि जिनवर के सत्रह गणधर, यम नियमों के सागर।
'सुप्रभ' प्रमुख गणाधिप उनमें, करते ज्ञान उजागर।।ये.।।22।।

नेमिनाथ के ग्यारह गणधर, ऋद्धि सिद्धि गुण धारें।
'श्री वरदत्त' प्रमुख गणधर हैं, गुणमणि माला धारें।।ये.।।23।।

पार्श्वनाथ के दश गणधर गुरु, चौंसठ ऋद्धि धरें हैं।
'प्रमुख स्वयंभू' गणधर उनमें, स्वात्मपियूष भरे हैं।।ये.।।24।।

महावीर प्रभु के गणधर हैं, ग्यारह सब गुण पूरे।
'इंद्रभूति गौतम' स्वामी हैं, यम की समरथ चूरें।।ये.।।25।।

–शंभु छंद–

चौबिस जिनके सब गणधर गुरु, चौंसठ ऋद्धी को धारे हैं।
ये चौदह सौ उनसठ[1] मानें, भक्तों को भव से तारे हैं।।
सर्वौषधि आदिक ऋद्धी से, सब रोग शोक दुःख हरण करें।
हम इनको वंदें भक्ती से, ये मुझमें समरस सुधा भरें।।26।।

–दोहा–

नमूं नमूं गणधर गुरु, द्वादशगण के नाथ।
ज्ञानमती सुखसंपदा, हेतु नमाऊं माथ।।27।।

1. तिलोयपण्णत्ति में 1459 माने हैं। उत्तरपुराण में 1452 संख्या मानी है।

महावीर स्वामी के ११ गणधरदेव स्तोत्र

रचयित्री-गणिनी ज्ञानमती

–सोरठा–

स्वानुभूति से आप, नित आतम अनुभव करें।
द्वादशगण के नाथ, नमूं नमूं नित भक्ति से।।

–दोहा–

'इन्द्रभूति' गणधर प्रथम, गौतम नाम प्रसिद्ध।
जिनकी कृपा प्रसाद से, मोक्षमार्ग है सिद्ध।।1।।

''वायुभूति' गणधर दुतिय, सर्वऋद्धिपरिपूर्ण।
जो जन वंदे भक्ति से, करे मोह अरि चूर्ण।।2।।

'अग्निभूति' गणधर तृतिय, नमूं सर्वसुख कंद।
ध्यान अग्नि से कर्म दह, बने सिद्ध भगवंत।।3।।

गणी 'सुधर्माचार्य' गुरु, महावीर के नंद।
वंदूं शीश नमाय के, पाऊं परमानंद।।4।।

'श्री मौर्य' गणधर गुरु, भविजन के शिर ताज।
वंदूं शीश नमाय के, मिले सौख्य साम्राज्य।।5।।

गणी 'मौन्द्रय' गुरु के चरण, नमूँ सर्व सुखकार।
पाऊं निज सुखसंपदा, मिले भवोदधि पार।।6।।

गणधर 'पुत्र' सुनाम है, सन्मति प्रभु के नंद।
नमूं सदा मैं भक्ति से, पाऊं सौख्य अनिंद्य।।7।।

'श्रीमैत्रेय' गणीन्द्र को, नमूं नमूं शत बार।
मन वच तन से वंदते, भरे सौख्य भंडार।।8।।

गणी 'अकंपन' को नमूं, सर्व ऋद्धि के ईश।
ऋद्धि सिद्धि को पाय के, वसूं भुवन के शीश।।9।।

'अंधवेल' गणधर गुरू, मोहध्वांत से दूर।
नमूं चरण अरविंद मैं, पाऊं सुख भरपूर।।10।।
गुरु 'प्रभास' गणधर चरण, वंदत हो आनंद।
पाऊं ज्ञान प्रकाश मैं, हरू जगत के द्वंद्व।।11।।

–नरेन्द्र छंद–

महावीर प्रभू के गणधर हैं, ग्यारह[1] सब गुण पूरे।
इन्द्रभूति गौतम आदिक ये, यम की समरथ चूरें।।
ये भव्यों के रोग शोक दुख, दारिद कष्ट निवारें।
नव निधि ऋद्धी यश संपत्ती, देकर भव से तारें।।12।।

गुरु के बिना संसार समुद्र नहीं तर सकते

न विना यानपात्रेण तरितुं शक्यतेऽर्णवः।
नर्ते गुरूपदेशाच्च सुतरोऽयं भवार्णवः।।
बन्धवो गुरवश्चेति द्वये संप्रीतये नृणाम्।
बन्धवोऽत्रैव संप्रीत्यै गुरवोऽमुत्र चात्र च।।

जिस प्रकार जहाज के बिना समुद्र नहीं तिरा जा सकता है उसी प्रकार गुरु के उपदेश के बिना यह संसाररूपी समुद्र नहीं तिरा जा सकता है। इस संसार में भाई और पुत्र दोनों ही मनुष्यों की प्रीति के लिए होते हैं, किन्तु भाई तो इस लोक में ही प्रीति उत्पन्न करते हैं और गुरु इस लोक तथा परलोक दोनों ही लोकों में विशेषरूप से प्रीति के लिए होते हैं। अर्थात् भाई से इस लोक में ही सुख मिलता है तथा गुरु से इस भव और परभव में भी सर्वत्र सुख, कल्याण और मोक्ष मार्ग की प्राप्ति होती है। अतः सदैव गुरु के चरणों की सेवा करते रहना चाहिए।

–भगवज्जिनसेनाचार्य

1. ये 11 गणधर के नाम उत्तरपुराण के आधार से हैं।

श्री गणधर देव वंदना

-गणिनी ज्ञानमती

–त्रिभंगी छंद–

जय जय श्री गणधर, धर्म धुरंधर, जिनवर दिव्यध्वनी धारें।
द्वादश अंगों में, अंग बाह्य में, गूँथे ग्रन्थ रचें सारे।।
गुरु नग्न दिगंबर, सर्व हितंकर, तीर्थंकर के शिष्य खरे।
मैं नमूँ भक्ति धर, ऋद्धि निधीश्वर, मुझ शिवपथ निर्विघ्न करें।।1।।

–स्रग्विणी छंद–

मैं नमूँ मैं नमूँ नाथ गणधार को।
शील संयम गुणों के सुभंडार को।।
नाथ तेरे बिना कोई ना आपना।
शीघ्र संसार वाराशि से तारना।।2।।
ऋद्धियाँ सर्व तेरे पगों के तले।
सर्व ही सिद्धियाँ आप चरणों भले।।नाथ.।।3।।
हलाहल विष कभी पाणि में आवता।
शीघ्र अमृत बने ऋद्धि गुण गावता।।नाथ.।।4।।
दीप्ततप ऋद्धि से नित्य[1] उपवास है।
देह की कांति फिर भी द्युतीमन्त है।।नाथ.।।5।।
सर्व चौंसठ ऋद्धी धरें गुण भरें।
भक्तगण की सभी आश पूरी करें।।नाथ.।।6।।
विघ्न बाधा हरो सर्व सम्पत भरो।
स्वात्मपीयूष दे नाथ तृप्ती करो।।नाथ.।।7।।
मोह का नाशकर क्रोध शत्रू हरो।
मृत्यु को मार दूँ ऐसी शक्ती भरो।।नाथ.।।8।।

1. दीप्त तप ऋद्धि से सदाकाल आहार बिना भी शरीर का तेज बढ़ता ही रहता है। धवला पुस्तक पृ. 127।

चार ज्ञानी प्रभो! चार गति भय हरो।
दे चतुष्टय अनंती सदा सुख करो।।नाथ.।।9।।

इन्द्रभूती महाज्ञान मद से भरे।
पास आते हि सम्यक्त्व निधि को धरें।।नाथ.।।10।।

शिष्य होके दिगम्बर मुनी बन गये।
चार ज्ञानी हुये गणपती बन गये।।नाथ.।।11।।

वीर की ध्वनि छियासठ दिनों में खिरी।
इंद्र का हर्ष ना मावता उस घरी।।नाथ.।।12।।

श्रावणी प्रतिपदा दिन प्रथम वर्ष का।
वीरशासन दिवस आज भी शर्मदा।।नाथ.।।13।।

बारहों अंग पूर्वों कि रचना करी।
आज तक भी वही सार[1] में है भरी।।नाथ.।।14।।

गणधरों के बिना दिव्यध्वनि ना खिरे।
पद उन्हें जो प्रभू पास दीक्षा धरें।।नाथ.।।15।।

गणधरों का सुमाहात्म्य मुनि गावते।
कीर्ति गाके कोई पार ना पावते।।नाथ.।।16।।

धन्य मैं धन्य मैं धन्य मैं हो गया।
धन्य जीवन सफल आज मुझ हो गया।।नाथ.।।17।।

आप गणइंद्र की भक्ति शोकापहा[2]।
आप की भक्ति ही सर्वसौख्यावहा[3]।।नाथ.।।18।।

पूरिये नाथ मेरी मनोकामना।
'ज्ञानमती' पूर्ण हो सुख असाधारणा।।नाथ.।।19।।

–दोहा–

चौबीसों तीर्थेश के, गणधर गुण आधार।
नमूँ नमूँ उनके चरण, मिले स्वात्मनिधिसार।।20।।

1. अंगपूर्व के अंश के साररूप में आज जैन ग्रंथ हैं। 2. शोकनाशिनी। 3. सुख देने वाली।

गणधरवलय मंत्र स्तोत्र

-गणिनी ज्ञानमती

–चौबोल छंद–

आवो हम सब करें वंदना , गणधर देव प्रधान की।
जिनवर दिव्यध्वनी को झेलें, द्वादशांग श्रुतवान की।।वंदे गणधरम्-4

अड़तालिस ऋद्धी को धारें, द्वादशगण के ईश्वर हैं।
यंत्ररूप हैं मंत्ररूप हैं, तंत्ररूप भी परिणत हैं।।
ऐसे गुरु को वंदन करते, मिले राह कल्याण की।।आवो.।।

श्री गणधर गुरु की संस्तुति से, सर्वविघ्न संहार करें।
ज्वर अतिसार आदि रोगों का, क्षण भर में परिहार करें।।
शीश झुकाकर नमते इनको, मिले ज्योति निज ज्ञान की।।आवो.।।

तर्ज–सद्राह पे जीवन नैया लगा.....

–शंभु छंद–

गणधर के गुणों को गाते चलो, मनवांछित फल पा जावोगे।
भक्ती से शीश झुकाते चलो, धन सुख संपद पा जावोगे।।टेक.।।
कर्मों को जीते वे जिन हैं, आचार्य उपाध्याय साधू भी।
जिनकी मुनि की संस्तुति कर लो, आतम सुख भी पा जावोगे।।
।।गणधर.।।1।।

बहुविध अतिसार रोग हैजा, आदिक सब दोष विनश जाते।
सब कर्म शत्रु भी दूर भगें, सब ऋद्धि समृद्धी पावोगे।।
।।गणधर.।।2।।

घर पुत्र पिता परिजन पुरजन, ये अपने नहीं पराये हैं।
भगवान को अपना मान चलो, जिनगुण संपद् पा जावोगे।।
।।गणधर.।।3।।

ॐ ह्रीं अर्हं णमो जिणाणं झ्रौं झ्रौं नमः स्वाहा।।1।।

गणधर के गुणों को गाते चलो, मनवांछित फल पा जावोगे।
भक्ती से शीश झुकाते चलो, धन सुख संपद पा जावोगे।।टेक.।।

जो अवधीज्ञान धरें मुनिवर, जिन बनें मुक्ति को वर लेते।
वे आत्म रसास्वादी प्रभु हैं, उन नमत अवधि पा जावोगे।।
।।गणधर.।।1।।

नाना विध के ज्वर रोग नशे, तन में मन में भी शांती हो।
ऋद्धीधारी गणधर भक्ती, करते भवदधि तर जावोगे।।
।।गणधर.।।2।।

माया के अंधेरे में प्राणी, नहिं ज्ञान किरण पा सकते हैं।
गुरुवों की शरण में आ जावो, फिर ज्ञान ज्योति पा जावोगे।।
।।गणधर.।।3।।

ॐ ह्रीं अर्हं णमो ओहिजिणाणं झ्रौं झ्रौं नमः स्वाहा।।2।।

गणधर के गुणों को गाते चलो, मनवांछित फल पा जावोगे।
भक्ती से शीश झुकाते चलो, धन सुख संपद पा जावोगे।।टेक.।।
जो मुनि परमावधि पा लेते, उस ही भव से शिव प्राप्त करें।
तुम उनकी शरण में आ जावो, जिनधर्मामृत पा जावोगे।।
।।गणधर.।।1।।

भक्तों के शिरोरोग सब ही, नश जाते जिनवर भक्ती से।
परमावधि जिन की भक्ति करो, परमावधि को पा जावोगे।।
।।गणधर.।।2।।

नानाविध के संक्लेश किये, ज्ञानावरणादि बंधा करते।
इन कर्मों से छुटकारा हो, ऐसी युक्ती पा जावोगे।।
।।गणधर.।।3।।

ॐ ह्रीं अर्हं णमो परमोहिजिणाणं झ्रौं झ्रौं नमः स्वाहा।।3।।

गणधर के गुणों को गाते चलो, मनवांछित फल पा जावोगे।
भक्ती से शीश झुकाते चलो, धन सुख संपद पा जावोगे।।टेक.।।
जो मुनि सर्वावधि ज्ञानी हैं, त्रिभुवन के मूर्त सभी जानें।
इनको भी मुक्ति इसी भव से, नमते युक्ती पा जावोगे।।
।।गणधर.।।1।।

भक्तों की सर्व नेत्र व्याधी, गणधर भक्ती से नश जातीं।
सर्वावधि ज्ञान मिलेगा तुम्हें, निज भेदज्ञान पा जावोगे।।
।।गणधर.।।2।।

इन मुनियों की श्रद्धा भक्ती, भवदधि से पार लगा देगी।
तुम इनकी शरण में आ जावो, फिर ज्ञान ऋद्धि पा जावोगे।।
।।गणधर.।।3।।

ॐ ह्रीं अर्हं णमो सव्वोहिजिणाणं झ्रौं झ्रौं नमः स्वाहा।।4।।

गणधर के गुणों को गाते चलो, मनवांछित फल पा जावोगे।
भक्ती से शीश झुकाते चलो, धन सुख संपद पा जावोगे।।टेक.।।
जिनकी अवधी का अंत नहीं, वे ही अनंत अवधी मानें।
ये केवलज्ञानी ऋषि होते, इनसे निजरश्मी पाओगे।।
।।गणधर.।।1।।

गणधर भक्ती से नानाविध, भी कर्ण रोग नश जाते हैं।
इन्द्रिय विषयों को तजते ही, निज ज्ञान अतीन्द्रिय पावोगे।।
।।गणधर.।।2।।

सब जन में केवलज्ञान भरा, यह कर्मावरण उसे ढकता।
कैसे विनाश हो कर्मों का, भक्ती से शक्ती पावोगे।।
।।गणधर.।।3।।

ॐ ह्रीं अर्हं णमो अणंतोहिजिणाणं झ्रौं झ्रौं नमः स्वाहा।।5।।

गणधर के गुणों को गाते चलो, मनवांछित फल पा जावोगे।
भक्ती से शीश झुकाते चलो, धन सुख संपद पा जावोगे।।टेक.।।
जैसे कोठे में धान्य भरें, सब पृथक् पृथक् रह सकते हैं।
वैसे ही कोष्ठबुद्धि मुनि को, नमते बुद्धी पा जावोगे।।
।।गणधर.।।1।।

नाना कुशूल गुल्मादि रोग, सब उदर रोग नश जाते हैं।
जिन कोष्ठबुद्धि के वंदन से, मानस शांती पा जावोगे।।
।।गणधर.।।2।।

मति ज्ञानावरण क्षयोपशम से, बुद्धी में अतिशय आ जाता।
तुम इन मुनियों की भक्ति करो, धारणा शक्ति पा जावोगे।।
।।गणधर.।।3।।

ॐ ह्रीं अर्हं णमो कोट्ठबुद्धीणं झ्रौं झ्रौं नमः स्वाहा।।6।।

गणधर के गुणों को गाते चलो, मनवांछित फल पा जावोगे।
भक्ती से शीश झुकाते चलो, धन सुख संपद पा जावोगे।।टेक.।।
ज्यों बीज से खेत फलें कोसों, त्यों ज्ञान बढ़े जिन मुनियों का।
उन बीज बुद्धि ऋषि को वंदो, तुम ज्ञान किरण पा जावोगे।।
।।गणधर.।।1।।

हिचकी व श्वास संग्रहणि आदि, नाना विध रोग विनश जाते।
जिन बीजबुद्धि की भक्ती से, तुम पूर्ण स्वस्थ हो जावोगे।।
।।गणधर.।।2।।

आत्मा में ज्ञान अनंत भरा, कर्मों ने इसको क्षीण किया।
गुरुभक्ति से इसे बढ़ाकर तुम, आकाश को भी छू जावोगे।।
।।गणधर.।।3।।

ॐ ह्रीं अर्हं णमो बीजबुद्धीणं झ्रौं झ्रौं नमः स्वाहा।।7।।

गणधर के गुणों को गाते चलो, मनवांछित फल पा जावोगे।
भक्ती से शीश झुकाते चलो, धन सुख संपद पा जावोगे।।टेक.।।
जो एक मात्र पद पढ़ते ही, संपूर्ण ग्रंथ का अर्थ करें।
यह पदानुसारी बुद्धि ऋद्धि, नमते इसको पा जागे।।
।।गणधर.।।1।।

सब जन के बैर परस्पर के, गणधर भक्ती से दूर भगें।
आपस में परम प्रीति होगी, त्रैलोक्य प्रेम पा जावोगे।।
।।गणधर.।।2।।

सब पाठ याद कर कर भूलें, धारणावरण स्मृति हरता।
ऋषियों की पदरज शिर पे धरो, स्मरण शक्ति पा जावोगे।।
।।गणधर.।।3।।

ॐ ह्रीं अर्हं णमो पादाणुसारीणं झ्रौं झ्रौं नमः स्वाहा।।8।।

तर्ज–गोमटेश जय गोमटेश.....

आत्मज्योति, जय आत्मज्योति, मम हृदय विराजो-2।
हम यही भावना करते हैं, ऐसा आने वाला कल हो।।
हो नगर-नगर में जिनभक्ती, सारे जग में शुभ मंगल हो।।
।।हम.।।1।।

श्रोत्रेन्द्रिय के उत्कृष्ट क्षेत्र के, बाहर का भी जो सुन लें।
संख्यातों योजन तक मानव, पशु के सब शब्द समझ भी लें।।
संभिन्न श्रोतृबुद्धी मुनि को–2, वंदन करते मन उज्ज्वल हो।।
।।हम.।।2।।

जो परम तपस्या करते हैं, वे ही ऐसी ऋद्धी पाते।
इनसे जन-जन का हित करके, वे मुक्ति वल्लभा पा जाते।।
इन मुनियों की संस्तुति करते-2, मेरा जीवन भी उज्ज्वल हो।।
।।हम.।।3।।

मानव के खांसी श्वांस आदि, नाना रोगों की शांती हो।
सब पीड़ायें भी तत्क्षण ही, नश जावें यदि जिन भक्ती हो।।
ऐसे गणधर गुरु को वंदत–2, सब विघ्न नशें सुख अविचल हो।।
।।हम.।।4।।

ॐ ह्रीं अर्हं णमो संभिण्णसोदाराणं झ्रौं झ्रौं नमः स्वाहा।।9।।

आत्मज्योति, जय आत्मज्योति, मम हृदय विराजो-2।
हम यही भावना करते हैं, ऐसा आने वाला कल हो।।टेक.।।
हम यही भावना करते हैं, ऐसा आने वाला कल हो।
हो नगर-नगर में जिनभक्ती, सब जन-जन का शुभमंगल हो।।
।।हम.।।1।।

जो जन गुरु के उपदेश बिना, स्वयमेव बोध को पाते हैं।
वे स्वयंबुद्ध ऋद्धी धरते, भक्तों की बुद्धि बढ़ाते हैं।।
इन मुनियों को वंदन करते-2, मेरा मन अतिशय उज्ज्वल हो।।
।।हम.।।2।।

यह तन नाना रोगों का घर, नश्वर है घृणित अपावन है।
इस तन से संयम धारण कर, मुनि बनते तरण व तारण हैं।।

ऐसे मुनियों की भक्ती कर-2, मेरा जीवन भी उज्ज्वल हो।।
।।हम.।।3।।

जो कविता अरु वादित्व शक्ति, अतिशायी पाकर भी निस्पृह।
जिनधर्म प्रभावन करें सतत, निजमुक्तिरमा में भी सस्पृह।।
ऐसे गणधरगुरु को वंदत–2, मेरा मन निज में निश्चल हो।।
।।हम.।।4।।

ॐ ह्रीं अर्हं णमो सयंबुद्धाणं झ्रौं झ्रौं नमः स्वाहा।।10।।

आत्मज्योति, जय आत्मज्योति, मम हृदय विराजो-2।
हम यही भावना करते हैं, ऐसा आने वाला कल हो।।
जो उल्का पतन आदि लखकर, वैराग्य लिये संयम धारें।।
ऐसे मुनि ही प्रत्येक बुद्ध, होकर अगणित जन को तारें।
इन मुनियों की भक्ती करते-2, भक्ती ध्वनि का कोलाहल हो।।
।।हम.।।1।।

जो मुनी बहुत विध तप तपते, वे मुक्ति राज्य को पा लेते।
ऐसे मुनि के चरणोदक से, जन मस्तक पावन कर लेते।।
इन गुरु की भक्ती करने से-2, मेरा जीवन भी उज्ज्वल हो।।
।।हम.।।2।।

परवादी मिथ्या विद्या के, मद से जिनधर्म विरोधी हों।
शास्त्रार्थ कुशल परमत भेदी, जिनधर्म प्रभावक बुद्धी हो।।
ऐसे गणधर गुरु स्वयंबुद्ध–2, इन वंदन से सुख अविचल हो।।
।।हम.।।3।।

ॐ ह्रीं अर्हं णमो पत्तेयबुद्धाणं झ्रौं झ्रौं नमः स्वाहा।।11।।

आत्मज्योति, जय आत्मज्योति, मम हृदय विराजो-2।
हम यही भावना करते हैं, ऐसा आने वाला कल हो।।
जो गुरुओं का उपदेश सुनें, बोधित हों रत्नत्रय धारें।
अट्ठाइस मूलगुणों से युत, वे साधू भव्यों को तारें।।
इन गुरुओं की स्तुति करते-2, मिल जावे स्तुति का फल हो।।
।।हम.।।1।।

जिनकी भक्ती से चोर लुटेरों, के भय स्वयं विनश जाते।
जो हित मित भाषा समिति धरें, सब जन को तर्पित कर पाते।।
ऐसे गणधर गुरु को वंदत–2, मेरा मन अतिशय निश्छल हो।।
।।हम.।।2।।

यह मोहनीय है महाशत्रु, सब कर्मों का यह राजा है।
इसका दर्शनमोहनीय भेद, नशते सम्यक्त्व प्रकाशा है।।
क्षायिक सम्यक्त्व मिले मुझको-2, मेरा जीवन अति उज्ज्वल हो।।
।।हम.।।3।।

ॐ ह्रीं अर्हं णमो बोहियबुद्धाणं झ्रौं झ्रौं नमः स्वाहा।।12।।

आत्मज्योति, जय आत्मज्योति, मम हृदय विराजो-2।
हम यही भावना करते हैं, ऐसा आने वाला कल हो।।
मन वच तन से अति सरल मनोगत, सभी वस्तु को जो जानें।
वे ऋजुमति मनपर्ययज्ञानी, मूर्तिक पदार्थ को ही जानें।
उन मुनियों की संस्तुति करते-2, सब जन मन में भी हलचल हो।।
।।हम.।।1।।

सब जन को शांति करें गणधर, ऋजुमति ऋद्धी को पा करके।
सब वैर विरोध तजे तत्क्षण, इन गुरु की चरण शरण आके।।
सब ज्ञान स्वयं ही प्रगटित हों–2, निज आत्मा में मन निश्चल हो।।
।।हम.।।2।।

प्रथमानुयोग करणानुयोग, चरणानुयोग पढ़ते-पढ़ते।
द्रव्यानुयोग के पात्र बने, जिनवाणी को पढ़ते-पढ़ते।।
इन ऋषियों को वंदन करते-2, मेरा जीवन भी उज्ज्वल हो।।
।।हम.।।3।।

ॐ ह्रीं अर्हं णमो उजुमदीणं झ्रौं झ्रौं नमः स्वाहा।।13।।

आत्मज्योति, जय आत्मज्योति, मम हृदय विराजो-2।
हम यही भावना करते हैं, ऐसा आने वाला कल हो।।
जो जन के सरल कुटिल मनगत, संपूर्ण मूर्त वस्तू जानें।

वे विपुलमती मनपर्यय मुनि, इस भव से सकल कर्म हानें।।
ऐसे गुरुवों का वंदन कर-2, भक्तों का मन अति निर्मल हो।
।।हम.।।1।।
जिनकी भक्ती से बहुश्रुत ज्ञान, प्रगट हो परमानंद मिले।
जिनके वन्दन से ज्ञान सूर्य, प्रगटे निज हृदय सरोज खिले।।
ऐसे गणधर गुरु को वंदत–2, मेरा मन अतिशय निर्मल हो।।
।।हम.।।2।।
जो पाँच महाव्रत पाँच समिति, तीनों गुप्ती को धरते हैं।
वे नरतन को पावन करके, निज आत्मनिधी को वरते हैं।।
इन मुनियों को शत-शत वंदन–2, मेरा जीवन भी उज्ज्वल हो।।
।।हम.।।3।।

ॐ ह्रीं अर्हं णमो विउलमदीणं झ्रौं झ्रौं नमः स्वाहा।।14।।

आत्मज्योति, जय आत्मज्योति, मम हृदय विराजो-2।
हम यही भावना करते हैं, ऐसा आने वाला कल हो।।
ग्यारह अंगों दशपूर्वों को, पढ़कर दशपूर्वी मुनि इनसे।
जब दशवां पूर्व पढ़े तब ही, विद्यादेवी के आने से।।
जो चारित से विचलित नहिं हों-2, इन नमते आतम निर्मल हो।।
।।हम.।।1।।
इन गुरुओं की भक्ती करते, संपूर्ण शास्त्र का ज्ञान मिले।
व्रत शील पूर्ण हो जाते हैं, इन नमते ज्ञान प्रभात खिले।।
ऐसे गणधर की स्तुति कर–2, मेरा मन निज में निश्चल हो।।
।।हम.।।2।।
इन मुनियों का व्रत ब्रह्मचर्य, त्रैलोक्यपूज्य कहलाता है।
इन शरणागत में आने से, चारित्र विमल हो जाता है।
इन मुनि को वंदन करने से-2, लौकांतिक सुरपद का फल हो।।
।।हम.।।3।।

ॐ ह्रीं अर्हं णमो दसपुव्वीणं झ्रौं झ्रौं नमः स्वाहा।।15।।

आत्मज्योति, जय आत्मज्योति, मम हृदय विराजो-2।
हम यही भावना करते हैं, ऐसा आने वाला कल हो।।
जो चौदह पूर्वों के ज्ञाता, श्रुतकेवलज्ञानी पद लभते।
उनके चरणों का आश्रय ले, क्षायिक समकित भी पा सकते।।
ये परोक्ष से त्रिभुवन जानें-2, इन भक्ती से श्रुतनिधि फल हो।।
।।हम.।।1।।
इन गुरु की भक्ती से तत्क्षण, निज-पर का शास्त्र ज्ञान होवे।
स्वपर समयविद् गणधर गुरु, अज्ञान पापमल भी धोवें।।
इन गणधर का वंदन करते–2, मेरा मन निज में निश्चल हो।।
।।हम.।।2।।
जो आर्तरौद्र दुर्ध्यान रहित, शुभ धर्म-शुक्ल के ध्यानी हैं।
इन गुरु की महिमा अद्भुत है, ये पाते शिव रजधानी हैं।।
इन गणधर की भक्ती करते-2, मेरा जीवन अति उज्ज्वल हो।।
।।हम.।।3।।

ॐ ह्रीं अर्हं णमो चउदसपुव्वीणं झ्रौं झ्रौं नमः स्वाहा।।16।।

यह मानव तन, अनमोल रतन, पा विषयों में मत फंस जाना।
भवसिंधु अगर तरना चाहो, जिनचरण शरण में आ जाना।।टेक.।।
स्वर व्यंजन लक्षण चिन्ह स्वप्न, नभ भौम अंग ये आठ निमित।
इनसे शुभ-अशुभ बताते जो, उनके ऋद्धी अष्टांग निमित।।
इन मुनियों का वंदन करके, भक्ती कर पुण्य कमा जाना।।
।।यह.।।1।।
ये जीवन-मरण आदि ज्ञाता, फिर भी समरस का पान करें।
निजशुक्लध्यान के द्वारा ही, सब कर्मनाश शिवनारि वरें।।
उन गणधर की भक्ती करके, परमानंदामृत पा जाना।।
।।यह.।।2।।

ॐ ह्रीं अर्हं णमो अट्ठंगमहाणिमित्तकुसलाणं झ्रौं झ्रौं नमः स्वाहा।।17।।

यह मानव तन, अनमोल रतन, पा विषयों में मत फंस जाना।
भवसिंधु अगर तरना चाहो, जिनचरण शरण में आ जाना।।

अणिमा महिमा लघिमा गरिमा, प्राप्ती प्रकाम्य ईशित्व वशी।
अप्रतीघात अंतर्धानी, विक्रिया कामरूपी आदी।
विक्रिया ऋद्धि गुरु को नम लो, तुम इनका वंदन कर जाना।।
।।यह.।।1।।

ये ऋद्धी जो मुनि पाते हैं, वे विष्णुकुमार सदृश होते ।
मुनियों की रक्षा करके वे, सातिशय पुण्य भागी होते ।।
गणधर भक्ती से इच्छित फल, पाकर आतमनिधि पा जाना।।
।।यह.।।2।।

ॐ ह्रीं अर्हं णमो विउव्वइड्ढिपत्ताणं झ्रौं झ्रौं नमः स्वाहा।।18।।

तर्ज–यह नंदनवन, यह सुमनसवन.....

यह मानव तन, अनमोल रतन, पा विषयों में मत फंस जाना।
भवसिंधु अगर तरना चाहो, जिनचरण शरण में आ जाना।।

जातीविद्या कुलविद्या तज, तपविद्या धर जो साधू हैं।
विद्यानुवाद पढ़कर भी मुनि, माने विद्याधर साधू हैं।।
ये विद्याओं से काम न लें, इनकी भक्ती कर सुख पाना।।
।।यह.।।1।।

जो महासाधु संयमधारी, तपकर अज्ञान हटाते हैं।
इनकी भक्ती से गगन गमन, शक्ती भाक्तिक जन पाते हैं।।
ये आत्मसुधारस पीते हैं, इनका वंदन कर हर्षाना।।
।।यह.।।2।।

ॐ ह्रीं अर्हं णमो विज्जाहराणं झ्रौं झ्रौं नमः स्वाहा।।19।।

यह मानव तन, अनमोल रतन, पा विषयों में मत फंस जाना।
भवसिंधु अगर तरना चाहो, जिनचरण शरण में आ जाना।।

जल जंघा तंतू फल व पुष्प, ये बीज गगन[1] अरु श्रेणी हैं।
इन पर चलते नहिं जीव मरें, आठों विध चारण ऋद्धी हैं।।

1. आकाश।

इन चारण ऋद्धी गुरुवों को, वंदन कर पुण्य कमा जाना।।
।।यह.।।1।।

इनकी भक्ती से नष्ट वस्तु का, ज्ञान मनोगत ज्ञान मिले।
इनके प्रसाद से विक्रिय कर, अतिशय ऋद्धी भी स्वयं मिले।।
इन परमानंद रसास्वादी को, नमते निजसुख पा जाना।।
।।यह.।।2।।

ॐ ह्रीं अर्हं णमो चारणाणं झ्रौं झ्रौं नमः स्वाहा।।20।।

यह मानव तन, अनमोल रतन, पा विषयों में मत फंस जाना।
भवसिंधु अगर तरना चाहो, जिनचरण शरण में आ जाना।।
पूरब भव के संस्कारों से, ज्यों की त्यों ज्ञान प्रगट होता।
गुरुमुख से विनय सहित पढ़कर, वैनयिक ज्ञान विकसित होता।।
या तप बल से प्रज्ञा प्रगटे, इन मुनि का वंदन कर जाना।।
।।यह.।।1।।

गणधर की प्रज्ञा स्वाभाविक, ये प्रज्ञाश्रमण महामुनि हैं।
औत्पत्तिक विनयज कर्मज अरु, परिणामिक प्रज्ञा चउविध हैं।।
आयू अवसान ज्ञानधारी, प्रज्ञाश्रमणों के गुण गाना।।
।।यह.।।2।।

ॐ ह्रीं अर्हं णमो पण्णसमणाणं झ्रौं झ्रौं नमः स्वाहा।।21।।

यह मानव तन, अनमोल रतन, पा विषयों में मत फंस जाना।
भवसिंधु अगर तरना चाहो, जिनचरण शरण में आ जाना।।

मनुजोत्तर पर्वत पर्यंते, इच्छानुसार नभ में विहरें।
आकाशगमनचारी वे मुनि, तप बल से ऋद्धी प्राप्त करें।।
इन महासंयमी मुनियों को, वंदन कर पाप नशा जाना।।
।।यह.।।1।।

प्राणीवध का परिहार करें, रत्नत्रय साधन में रत हैं।
इनके प्रसाद से अंतरिक्ष में, गमन शक्ति मिल जाती है।
इन गणधर की भक्ती करके, जिनगुण संपत्ती पा जाना।।
।।यह.।।2।।

ॐ ह्रीं अर्हं णमो आगासगामीणं झ्रौं झ्रौं नमः स्वाहा।।22।।

यह मानव तन, अनमोल रतन, पा विषयों में मत फंस जाना।
भवसिंधु अगर तरना चाहो, जिनचरण शरण में आ जाना।।
हालाहल विष का जहर चढ़ा, जिनके वचनों से दूर भगे।
ऐसी आशीविष ऋद्धि धरें, वे जन-जन का उपकार करें।।
इन गणधर गुरु का आश्रय ले, दुख से छुटकारा पा जाना।।
।।यह.।।1।।

नानाविध व्याधी से पीड़ित, या दरिद्रता से दुखी हुये।
इन गुरु का आशिष मिलते ही, सब दुख से जन मन मुक्त हुये।।
इन भक्ती से विद्वेष मिटे, इनसे मन पावन कर जाना।।
।।यह.।।2।।

ॐ ह्रीं अर्हं णमो आसीविसाणं झ्रौं झ्रौं नमः स्वाहा।।23।।

यह मानव तन, अनमोल रतन, पा विषयों में मत फंस जाना।
भवसिंधु अगर तरना चाहो, जिनचरण शरण में आ जाना।।
यदि क्रोधित हो मुनि कह देवें, ''मर जा'' तत्क्षण जन मर जावें।
नहिं किंतु दिगम्बर मुनि ऐसा, दुष्कृत्य कभी भी कर पावें।।
इनके अवलोके विष उतरे, तुम इनकी शरण में आ जाना।।
।।यह.।।1।।

इनके देखे अस्वस्थ जीव, हों पूर्ण स्वस्थ धन-धान्य भरें।
ये दृष्टीविष गणधर कृपालु, सब जन का ही उपकार करें।।
इनको वंदन कर स्थावर-त्रस, कृत सब विघ्न नशा जाना।।
।।यह.।।2।।

ॐ ह्रीं अर्हं णमो दिट्ठिविसाणं झ्रौं झ्रौं नमः स्वाहा।।24।।

तर्ज–करो कल्याण आतम का, भरोसा है नहीं पल का.....

नमन है सर्व गणधर को, जिन्होंने कर्म अरि नाशे।
नमन उन ऋद्धियों को भी, जिन्हों से आत्मगुण भासे।।टेक।।
पराक्रम घोर है जिनका, त्रिजग संहार में क्षम हैं।
जलधि शोषण धरा निगलन, प्रभृति सब कार्य कर पाते।।
।।नमन.।।1।।

विरोधी के वचन कीलित, स्वयं होते यही फल है।
गुरू की भक्ति से निश्चित, सभी जन इष्ट पाते हैं।।
।।नमन.।।2।।

ॐ ह्रीं अर्हं णमो उग्गतवाणं झ्रौं झ्रौं नमः स्वाहा।।25।।

नमन है सर्व गणधर को, जिन्होंने कर्म अरि नाशे।
नमन उन ऋद्धियों को भी, जिन्हों से आत्मगुण भासे।।टेक।।
बहुत उपवास करके भी, जिन्हों की दीप्ति बढ़ जावे।
बिना आहार के भी वे, अतुल शक्ती बढ़ाते हैं।।
।।नमन.।।1।।

महामुनि दीप्ततपधारी, मुक्तिकन्या वरण करते।
भक्ति से सैन्य स्तंभन, भक्त कर यश कमाते हैं।।
।।नमन.।।2।।

ॐ ह्रीं अर्हं णमो दित्ततवाणं झ्रौं झ्रौं नमः स्वाहा।।26।।

नमन है सर्व गणधर को, जिन्होंने कर्म अरि नाशे।
नमन उन ऋद्धियों को भी, जिन्हों से आत्मगुण भासे।।टेक।।

अधिक उपवास करने से, मूत्रमल आदि नश जावें।
करें आहार नहिं नीहार, ऐसी ऋद्धि पाते हैं।।
।।नमन.।।1।।

महामुनि तप्ततपधारी, अतीन्द्रिय सुख के अधिकारी।
इन्हों से अग्नि स्तंभन, शक्ति पा यश कमाते हैं।।
।।नमन.।।2।।

ॐ ह्रीं अर्हं णमो तत्ततवाणं झ्रौं झ्रौं नमः स्वाहा।।27।।

नमन है सर्व गणधर को, जिन्होंने कर्म अरि नाशे।
नमन उन ऋद्धियों को भी, जिन्हों से आत्मगुण भासे।।टेक।।
अनेकों ऋद्धि से संयुत, महातप जो सदा तपते।
देह की कांति से शोभें, सभी के दुख नशाते हैं।।
।।नमन.।।1।।

भक्ति से नीर स्तंभन, शक्ति को भक्त पा जाते।
करें हम वंदना इनकी, ये आतमनिधि दिलाते हैं।।
।।नमन.।।2।।

ॐ ह्रीं अर्हं णमो महातवाणं झ्रौं झ्रौं नमः स्वाहा।।28।।

नमन है सर्व गणधर को, जिन्होंने कर्म अरि नाशे।
नमन उन ऋद्धियों को भी, जिन्हों से आत्मगुण भासे।।टेक।।
घोर तप ऋद्धि जो धारें, सु बारह तप सभी तपते।
भयंकर वन में रह करके, अभय पद वे ही पाते हैं।।
।।नमन.।।1।।
करें सर्पादि विष को दूर, रोगादी को विनाशें भी।
त्रिविध योगी महामुनि ये, स्वयं शिवधाम पाते हैं।।
।।नमन.।।2।।

ॐ ह्रीं अर्हं णमो घोरतवाणं झ्रौं झ्रौं नमः स्वाहा।।29।।

नमन है सर्व गणधर को, जिन्होंने कर्म अरि नाशे।
नमन उन ऋद्धियों को भी, जिन्हों से आत्मगुण भासे।।टेक।।
मुनी के घोर गुणऋद्धी, डरे सब भूत प्रेतादी।
लाख चौरासि उत्तरगुण, धरें निजधाम पाते हैं।।
।।नमन.।।1।।
काचकामल प्रभृति रोगादि, गुरुभक्ती से नश जाते।
इन्हों की भक्ति स्तुति से, भक्त निज सिद्धि पाते हैं।।
।।नमन.।।2।।

ॐ ह्रीं अर्हं णमो घोरगुणाणं झ्रौं झ्रौं नमः स्वाहा।।30।।

नमन है सर्व गणधर को, जिन्होंने कर्म अरि नाशे।
नमन उन ऋद्धियों को भी, जिन्हों से आत्मगुण भासे।।टेक।।
पराक्रम घोर है जिनका, त्रिजग संहार में क्षम हैं।
जलधि शोषण धरा निगलन, प्रभृति सब कार्य कर पाते।।
।।नमन.।।1।।

महामुनि वीतरागी हैं, अशुभ किंचित् नहीं करते।
भक्तगण सिंह के भय को, दूर कर सौख्य पाते हैं।।
।।नमन.।।2।।

ॐ ह्रीं अर्हं णमो घोरगुणपरक्कमाणं झ्रौं झ्रौं नमः स्वाहा।।31।।

नमन है सर्व गणधर को, जिन्होंने कर्म अरि नाशे।
नमन उन ऋद्धियों को भी, जिन्हों से आत्मगुण भासे।।टेक।।
घोरगुण ब्रह्मचारी मुनि, अखंडित ब्रह्मचारी हैं।
परम शांती धरें निज में, अखंडित सौख्य पाते हैं।।
।।नमन.।।1।।
उपद्रव रोग कलहादी, वैर दुर्भिक्ष वध बंधन।
भूतप्रेतादि भय नाशें, जो गुरु गुण नित्य गाते हैं।।
।।नमन.।।2।।

ॐ ह्रीं अर्हं णमो घोरगुणबंभचारीणं झ्रौं झ्रौं नमः स्वाहा।।32।।

तर्ज–तज दिया छोड़ घर बार, कुटुंब परिवार धार मुनि बाना.....

श्री गणधर गुरु भगवंत, महागुणवंत, नमूँ गुण गाऊँ।
भक्ती से शीश नमाऊँ।।
जिनका संस्पर्श परम औषधि, सब रोग शोक दुख हरे तुरत।
उनकी संस्तुति भक्ती कर पाप नशाऊँ, भक्ती से शीश नमाऊँ।।1।।
ये मुनि आमौषधि ऋद्धि धरें, निज आत्मा को भी स्वस्थ करें।
इनके चरणों का आश्रय ले सुख पाऊँ, भक्ती से शीश नमाऊँ।।2।।
जो जन्मजात ही वैर धरें, वे गुरु भक्ती से प्रेम करें।
इनकी भक्ती से निज में प्रीति बढ़ाऊँ, भक्ती से शीश नमाऊँ।।3।।

ॐ ह्रीं अर्हं णमो आमोसहिपत्ताणं झ्रौं झ्रौं नमः स्वाहा।।33।।

श्री गणधर गुरु भगवंत, महागुणवंत, नमूँ गुण गाऊँ।
भक्ती से शीश नमाऊँ।।
जिनके तन का मल किंचित् भी, सब रोग शोक हर देता भी।
उन खेलौषधि मुनि के चरणों शिर नाऊँ, भक्ती से शीश नमाऊँ।।1।।

रोगी मुनि की सेवा करते, जो मन में ग्लानी नहिं धरते।
उनको हो ऐसी ऋद्धि प्रगट गुण गाऊँ, भक्ती से शीश नमाऊँ।।2।।

जो ऐसे गुरु की भक्ति करें, अपमृत्यु नाश दीर्घायु धरें।
इनको वंदत ही निज आतम निधि पाऊँ, भक्ती से शीश नमाऊँ।।3।।

ॐ ह्रीं अर्हं णमो खेल्लोसहिपत्ताणं झ्रौं झ्रौं नमः स्वाहा।।34।।

श्री गणधर गुरु भगवंत, महागुणवंत, नमूँ गुण गाऊँ।
भक्ती से शीश नमाऊँ।।

तन का बाहिर मल जल्ल कहा, ये भी औषधि सम प्रगट रहा।
इन जल्लौषधि मुनि नमते रोग नशाऊँ, भक्ती से शीश नमाऊँ।।1।।

तप तपते तन पावन होता, सब जन के दुख दारिद धोता।
ऐसे गुरुओं के गुण गाकर हर्षाऊँ, भक्ती से शीश नमाऊँ।।2।।

जो मन के भ्रम को दूर करें, व्याघ्रादि जंतु भी भीति हरें।
ऐसे गुरु को वंदत निर्भय बन जाऊँ, भक्ती से शीश नमाऊँ।।3।।

ॐ ह्रीं अर्हं णमो जल्लौसहिपत्ताणं झ्रौं झ्रौं नमः स्वाहा।।35।।

श्री गणधर गुरु भगवंत, महागुणवंत, नमूँ गुण गाऊँ।
भक्ती से शीश नमाऊँ।।

जिनकी पसेव कण आदि सभी, तन मल बन जाते औषधि भी।
इन ऋषियों की ऋद्धी को शीश नमाऊँ, भक्ती से शीश नमाऊँ।।1।।

जो गुरु की सेवा करते हैं, आहारदान बहु देते हैं।
वे पुण्य सातिशय भरें नमत सुख पाऊँ, भक्ती से शीश नमाऊँ।।2।।

इनकी भक्ती से इस जग में, गजमारि उपद्रव आदि भगें।
ऐसे गुरु की स्तुति से शांति बढ़ाऊँ, भक्ती से शीश नमाऊँ।3।।

ॐ ह्रीं अर्हं णमो विप्पोसहिपत्ताणं झ्रौं झ्रौं नमः स्वाहा।।36।।

श्री गणधर गुरु भगवंत, महागुणवंत, नमूँ गुण गाऊँ।
भक्ती से शीश नमाऊँ।।

जिनके तन से स्पर्श वायु, करती रोगी को दीर्घ आयु।
उनके चरणों की धूली शीश चढ़ाऊँ, भक्ती से शीश नमाऊँ।।1।।

जो मुनि सर्वौषधि ऋद्धि धरें, सब व्याधि विषादिक कष्ट हरें।
उनको वंदन कर पूर्ण स्वस्थता पाऊँ, भक्ती से शीश नमाऊँ।।2।।

जो सर्प बिच्छुमारी संकट, नरमारि उपद्रव आदि विविध।
इन गुरुभक्ती से दूर भगें सुख पाऊँ, भक्ती से शीश नमाऊँ।।3।।

ॐ ह्रीं अर्हं णमो सव्वोसहिपत्ताणं झ्रौं झ्रौं नमः स्वाहा।।37।।

श्री गणधर गुरु भगवंत, महागुणवंत, नमूँ गुण गाऊँ।
भक्ती से शीश नमाऊँ।।

जो इक मुहूर्त में द्वादशांग, चिंतन करते नहिं होय श्रांत।
उन मनोबली मुनियों को नितप्रति ध्याऊँ, भक्ती से शीश नमाऊँ।।1।।

इन गुरुओं के गुण को गावें, मेरा मन सुस्थिर हो जावे।
इन भगवंतों को हृदय कमल में लाऊँ, भक्ती से शीश नमाऊँ।।2।।

जो अश्वमारि आदिक संकट, भग जाते पशुओं के बहुविध।
इन गुरु प्रसाद से मानस शक्ति बढ़ाऊँ, भक्ती से शीश नमाऊँ।।3।।

ॐ ह्रीं अर्हं णमो मणबलीणं झ्रौं झ्रौं नमः स्वाहा।।38।।

श्री गणधर गुरु भगवंत, महागुणवंत, नमूँ गुण गाऊँ।
भक्ती से शीश नमाऊँ।।

जो द्वादशांग का पाठ करें, बस इक मुहूर्त में पूर्ण करें।
फिर भी नहिं थकता कंठ उन्हें शिर नाऊँ, भक्ती से शीश नमाऊँ।।1।।

इन मुनि को वचन सिद्धि वरती, केवलि में दिव्यध्वनि खिरती।
इन मुक्तिरमा पति के गुण को नित ध्याऊँ, भक्ती से शीश नमाऊँ।।2।।

अज मेषमारि संकट बहुविध, गुरु भक्ती से नशते सब दुख।
बहुभोग अभ्युदय सुखप्रद गुरुगुण गाऊँ, भक्ती से शीश नमाऊँ।।3।।

ॐ ह्रीं अर्हं णमो वचिबलीणं झ्रौं झ्रौं नमः स्वाहा।।39।।

श्री गणधर गुरु भगवंत, महागुणवंत, नमूँ गुण गाऊँ।
भक्ती से शीश नमाऊँ।।

संवत्सर भी उपवास करें, बाहूबलि सम वो शक्ति धरें।
इन कायबली के चरण हृदय में लाऊँ, भक्ती से शीश नमाऊँ।।1।।

ये त्रिभुवन को भी अंगुलि पर, बस उठा सकें यह शक्ति प्रवर।
शिवधाम बसें ऐसे गुरु के गुण गाऊँ, भक्ती से शीश नमाऊँ।।2।।
गो महिष मारि संकट नाना, गुरुभक्ति हरे यह सरधाना।
तनु शक्ति बढ़े निज आतम गुण विकसाऊँ, भक्ती से शीश नमाऊँ।।3।।
ॐ ह्रीं अर्हं णमो कायबलीणं झ्रौं झ्रौं नमः स्वाहा।।40।।

तर्ज–मेरे मन मन्दिर में आन.....

वंदूँ श्रीगणधर गुणखान, करो मेरे कर्मों की हान।
नीरस या विषमय भोजन हो, पाणि पात्र में आते पय हो।।
क्षीरस्रवी ये ऋद्धि महान, करो मेरे कर्मों की हान।।1।।
मुक्तिरमा इनको ही चाहे, भक्त भक्तिनद में अवगाहें।
मैं भी नमूँ सदा गुणखान, करो मेरे कर्मों की हान।।2।।
गण्डकमाला कुष्ठ क्षयादी, गुरुभक्ती से नशतीं व्याधी।
मिले आत्म आरोग्य महान, करो मेरे कर्मों की हान।।3।।
ॐ ह्रीं अर्हं णमो खीरसवीणं झ्रौं झ्रौं नमः स्वाहा।।41।।

वंदूँ श्रीगणधर गुणखान, करो मेरे कर्मों की हान।
करपुट में आहार दिया जो, रूखा भी घृतमय होता वो।
घृतस्रावी ये ऋद्धि महान, करो मेरे कर्मों की हान।।1।।
ये मुनि शिवपद पा जाते हैं, हम इनके आश्रय आते हैं।
इनके भक्त बने धनवान, करो मेरे कर्मों की हान।।2।।
एक दोय त्रय दिन अंतर में, इकांतरा आदिक ज्वर तन में।
सब विध ज्वर नशते दुखदान, करो मेरे कर्मों की हान।।3।।
ॐ ह्रीं अर्हं णमो सप्पिसवीणं झ्रौं झ्रौं नमः स्वाहा।।42।।

वंदूँ श्रीगणधर गुणखान, करो मेरे कर्मों की हान।
करपुट में कटु भी भोजन हो, मधुवत् मधुर स्वाद परिणत हो।।
भक्त स्वस्थता लहें महान, करो मेरे कर्मों की हान।।1।।
इनके वचन मधुर प्रिय हितकर, पुण्य उदय से भक्त शिवंकर।
नमूँ नमूँ ये सौख्य निधान, करो मेरे कर्मों की हान।।2।।

पित्त कुपित से बहुविध व्याधी, अल्सर आदि देह में व्यापीं।
गुरुभक्ती से स्वास्थ्य महान, करो मेरे कर्मों की हान।।3।।
ॐ ह्रीं अर्हं णमो महुरसवीणं झ्रौं झ्रौं नमः स्वाहा।।43।।

वंदूँ श्रीगणधर गुणखान, करो मेरे कर्मों की हान।
पाणिपात्र में आया भोजन, अमृत सम बन जाता तत्क्षण।
अमृतस्रावी मुनि सुखदान, करो मेरे कर्मों की हान।।1।।
इनके वच अमृतसम पोषें, भक्ती कर जन मन संतोषें।
नमूँ नमूँ ये समसुख खान, करो मेरे कर्मों की हान।।2।।
स्मृति शक्ती बढ़ती प्रतिक्षण, सब उपसर्ग दूर हों तत्क्षण।
इन गुरु की करुणा सुखदान, करो मेरे कर्मों की हान।।3।।
ॐ ह्रीं अर्हं णमो अमियसवीणं झ्रौं झ्रौं नमः स्वाहा।।44।।

वंदूँ श्रीगणधर गुणखान, करो मेरे कर्मों की हान।
जिस घर में आहार करें मुनि, भोजन क्षीण न होता उस दिन।।
संख्यातों करते क्षुध हान, करो मेरे कर्मों की हान।।1।।
मुनि के चहुंदिश चार हाथ में, जीव असंख्ये एक साथ में।
ये अक्षीण ऋद्धि अमलान, करो मेरे कर्मों की हान।।2।।
सब जन वश हों गुरुभक्ती से, इन अक्षीण ऋद्धि मुनि नमते।
मनवश कर तिष्ठूँ निज थान, करो मेरे कर्मों की हान।।3।।
ॐ ह्रीं अर्हं णमो अक्खीणमहाणसाणं झ्रौं झ्रौं नमः स्वाहा।।45।।

वंदूँ श्रीगणधर गुणखान, करो मेरे कर्मों की हान।
वृद्धिंगत महिमा के धारी, प्रभु तुम गुण अनंत भंडारी।
जिनका केवलज्ञान महान, करो मेरे कर्मों की हान।।1।।
नमूँ नमूँ मैं भक्ति भाव से, मेरा ज्ञान पूर्ण हो प्रगटे।
सर्व सुखों के आप निदान[1], करो मेरे कर्मों की हान।।2।।
सुगती के साधन बढ़ते हैं, राजतंत्र के भय नशते हैं।
वृद्धि आत्मगुण की अमलान, करो मेरे कर्मों की हान।।3।।
ॐ ह्रीं अर्हं णमो वड्ढमाणाणं झ्रौं झ्रौं नमः स्वाहा।।46।।

---

१. कारण।

वंदूँ श्रीगणधर गुणखान, करो मेरे कर्मों की हान।
कृत्रिम अकृत्रिम जिनमंदिर, सिद्धायतन कहाते सुंदर।
सिद्धक्षेत्र भी पूज्य महान, करो मेरे कर्मों की हान।।1।।
ज्ञानकिरण से सर्वलोक को, व्याप्त किया सारे अलोक को।
जगत व्याप्त विष्णू भगवान, करो मेरे कर्मों की हान।।2।।
निशदिन यही मंत्र जपने से, राजा आदिक वश में होते।
सर्व ऋद्धियाँ हों वश आन, करो मेरे कर्मों की हान।।3।।

ॐ ह्रीं अर्हं णमो सिद्धायदणाणं झ्रौं झ्रौं नमः स्वाहा।।47।।

वंदूँ श्रीगणधर गुणखान, करो मेरे कर्मों की हान।
बुद्ध ऋषी केवलज्ञानी हैं, पंचकल्याणक के स्वामी हैं।।
नमूँ चरण कमलों में आन, करो मेरे कर्मों की हान।।1।।
सभी ऋद्धियों को प्रगटित कर, शिवलक्ष्मी के हुए श्रेष्ठ वर।
नमते नवनिधि ऋद्धि प्रधान, करो मेरे कर्मों की हान।।2।।
इसे जपें जो भक्ति भाव से, सभी सिद्धियाँ प्रगटे उनके।
महति महावीर भगवान, करो मेरे कर्मों की हान।।3।।

ॐ ह्रीं अर्हं णमो भयवदो महदिमहावीरवड्ढमाणबुद्धिरिसीणं झ्रौं झ्रौं नमः स्वाहा।।48।।

-शंभु छंद-

अड़तालिस ऋद्धी के धारी, संपूर्ण महर्षी को वंदूँ।
संपूर्ण रोग सब शोक हरें, ऐसे गणधरगुरु अभिनंदूँ।।1।।
वरबुद्धि समृद्धी के दाता, रत्नत्रय वृद्धि करें ऋषिवर।
सब सिद्धि हेतु मैं नमन करूँ, ये गणधर गुरु हैं भव भयहर।।2।।

ॐ ह्रीं इवीं श्रीं अर्हं अ सि आ उ सा अप्रतिचक्रे फट् विचक्राय झ्रौं झ्रौं नमः स्वाहा।

गणधरवलय मंत्र महिमा

-गणिनी ज्ञानमती

धुन- नागिन-मेरा मन डोले.....

जय जय गणधर, गुण ऋद्धीश्वर, हम गायें तव गुणमाल को,
बहु भक्ति भाव से आये हैं।
नग्न दिगम्बर वेष धार के, पिछी कमंडलु धारा।
मूलोत्तर गुण अगणित उत्तम, धार के स्वात्म संवारा।।प्रभू जी.।।
पर्वत पर चढ़, निज में अति दृढ़, नित ध्याते आतमराम को,
बहु भक्ति भाव से आये हैं।।1।।
ग्रीष्म ऋतू में पर्वत ऊपर, वर्षा में तरु नीचे।
शीतकाल में नदी किनारे, आत्मध्यान में तिष्ठे।।प्रभू जी.।।
पद्मासन से, खड्गासन से, ध्यावें पहने गुणमाल को,
बहु भक्ति भाव से आये हैं।।2।।
तीर्थंकर की दिव्यध्वनी सुन, द्वादशांग में गूंथें।
भव्य असंख्यों को संबोधें, चतुर्गती से छूटें।।प्रभू जी.।।
निज रागद्वेष, हरकर अशेष, नित चखते साम्यरसाल को,
बहु भक्ति भाव से आये हैं।।3।।
सूरी के छत्तीस मूलगुण, उपाध्याय के पच्चिस।
साधू के अट्ठाइस मानें, तीनों में ये निश्चित।।प्रभू जी.।।
गुरु गणधर के, सब गुण चमकें, इनसे हैं मालामाल वो,
बहु भक्ति भाव से आये हैं।।4।।
दर्शमोह का मूल नाशकर, क्षायिक सम्यग्दृष्टी।
छठे सातवें गुणस्थान में, करें धर्म की वृष्टी।।प्रभू जी.।।
श्रेणी पे चढ़े, चउ घाति हने, फिर पाते केवलज्ञान को,
बहु भक्ति भाव से आये हैं।।5।।
मोक्ष मार्ग में विघ्न असंख्ये, किस विध मार्ग सरल हो।
गणधर गुरु को वंदन करते, सर्व विघ्न निष्फल हों।।प्रभू जी.।।

गुरु भक्ती से, सब पाप नशें, सब कार्य सिद्धि तत्काल हो,
बहु भक्ति भाव से आये हैं।।6।।

बहुविध रोग शोक दुख दारिद, मानस ताप असंख्ये।
इष्टवियोग अनिष्ट योग के, आर्तध्यान दुखकंदे।।प्रभू जी.।।
गुरुवंदन से, अभिनंदन से, नश जाते दुख दुर्वार जो,
बहु भक्ति भाव से आये हैं।।7।।

गणधर गुरु के सर्व ऋद्धियाँ, प्रगट हुईं श्रुत गायें।,
अन्य तपस्वी ऋषियों के भी, कतिपय ऋद्धि कहायें।।प्रभू जी.।।
रस त्याग करें, रस ऋद्धि वरें, ये करें स्वपर कल्याण को,
बहु भक्ति भाव से आये हैं।।8।।

उग्र उग्र तप करके साधू, दीप्ततपो ऋद्धीयुत।
नहिं आहार करें फिर भी ये, काय दीप्ति वृद्धीयुत।। प्रभू जी.।।
इन चरण नमें, भव में न भ्रमें, पा लेते निज गुणमाल को,
बहु भक्ति भाव से आये हैं।।9।।

वीरप्रभू के समवसरण में, गौतम ब्राह्मण आये।
तत्क्षण मुनिदीक्षा ले करके, गणधर प्रथम कहाये।। प्रभू जी.।।
जिन भक्ती से, वर मंत्र रचे, अड़तालिस ऋद्धीमान जो ,
बहु भक्ति भाव से आये हैं।।10।।

हे भगवन् हम शरण में आये, एक याचना पूरो।
केवल 'ज्ञानमती' बस एकहि, ऋद्धी दे यम चूरो।।प्रभू जी.।।
कर जोड़ खड़े, तुम चरण पड़े, दे दो रत्नत्रय माल को,
बहु भक्ति भाव से आये हैं।।11।।

-दोहा-

अड़तालिस गणधरवलय, मंत्र नमूँ तिहुंकाल।
श्री गणधरगुरुदेव को, नमूँ नमूँ नतभाल।।12।।

प्रशस्ति

-शंभु छंद-

श्रीवीरप्रभू के सन्निध में, जिनने स्वधर्म को प्राप्त किया।
ऐसे श्रीगौतम गणधर ने, ऋद्धी मंत्रों को बना दिया।।
अड़तालिस गणधरवलय मंत्र, ये मंगल मंत्र कहाते हैं।
इनकी स्तुति भक्ती करते, सब विघ्न स्वयं नश जाते हैं।।1।।

इस वीर प्रभू के शासन में, श्रीगौतम आदि गणीन्द्र हुये।
श्रीकुंदकुंद आचार्यदेव, इस युग में श्रेष्ठ मुनीन्द्र हुये।।
इस कुंदकुंद आम्नाय में शारद, गच्छ बलात्कारगण उत्तम।
चारित्र चक्रवर्ती गुरुवर, श्री शांतिसागराचार्य प्रथम।।2।।

श्रीवीरसागराचार्यवर्य, इनके ही पट्टाधीश मान्य।
ये मुझे आर्यिकाव्रत देकर, अन्वर्थ 'ज्ञानमती' दिया नाम।।
श्री सरस्वती माँ का प्रसाद, मुझको जो सम्यग्बुद्धि मिली।
श्रुतदेवी की सेवा करते, मन में भक्ती की कली खिली।।3।।

इन्द्रध्वज, कल्पद्रुम विधान, जन जन के मन को भाए हैं।
जन अष्टसहस्त्री की भाषा, टीकादिक से हरषाए हैं।।
वीराब्द पचीस शतक चालिस, हस्तिनापुर पौषशुक्ल पूनम।
गणिनी मैंने यह पूर्ण किया, श्रीगणधरवलय स्तोत्रोत्तम।।4।।

भाक्तिक जन इस मंत्र स्तोत्र, को पढ़कर रोग शोक नाशें।
धन धान्य वृद्धि उत्तम कीर्ती, पा निज में ज्ञानज्योति भासें।।
जब तक जग में जिनवर शासन, जिनधर्म अहिंसामय जब तक।
तब तक इस जग में यह स्तोत्र, भव्यों को होवे शांतीप्रद।।5।।

।।इति श्री गणधरवलयमंत्रस्तोत्रप्रशस्तिः।।

श्री गौतम गणधर चालीसा

रचयित्री–प्रज्ञाश्रमणी आर्यिका चंदनामती

–दोहा–

वंदूँ वीर जिनेन्द्र को, मन वच तन कर शुद्ध।
उनके गणधर शिष्य को, नमूँ हृदय कर शुद्ध।।1।।
श्री गौतम गणधर हुए, गणनायक मुनिराज।
जिनकी वाणी सुन बने, अन्य बहुत मुनिराज।।2।।
उन गणधर भगवान का, चालीसा सुखकार।
है सम्यक् श्रुतज्ञान का, यह भी इक आधार।।3।।

–चौपाई–

जय हो वीतराग प्रभु वाणी, वीर दिव्यध्वनि जगकल्याणी।।1।।
बने नाथ जब केवलज्ञानी, समवसरण रचना के स्वामी।।2।।
दिव्यध्वनी जब खिरी नहीं थी, इन्द्र के मन तब युक्ति हुई थी।।3।।
सोचा प्रभु को शिष्य चाहिए, गणधर पद के योग्य चाहिए।।4।।
तभी दिव्यध्वनि खिर सकती है, सारी जनता सुन सकती है।।5।।
इन्द्र ने अवधिज्ञान से जाना, एक महाज्ञानी पहचाना।।6।।
सुनो उसी ज्ञानी की गाथा, जो कैसे सम्यक्त्व है पाता।।7।।
मगध देश में ब्राह्मण नगरी, रहते थे वहाँ इक दम्पत्ती।।8।।
था शाण्डिल्य नाम पण्डित का, स्थंडिला नाम पत्नी का।।9।।
गौतम गार्ग्य पुत्रद्वय जनमे, सर्वकला में पारंगत वे।।10।।
दूजी भार्या नाम केशरी, वह भार्गव सुत की जननी थी।।11।।
इस प्रकार त्रय पुत्र को पाकर, थे शाण्डिल्य प्रसन्न गुणाकर।।12।।
इनके तीन नाम थे दूजे, जिनसे तीनों ही प्रसिद्ध थे।।13।।
इन्द्रभूति गौतम को जानो, गार्ग्य को अग्निभूति तुम मानो।।14।।
भार्गव वायुभूति कहलाया, तीनों में था मान समाया।।15।।

पाँच शतक शिष्यों का स्वामी, इन्द्रभूति गौतम जगनामी।।16।।
उनके पास इन्द्र ने जाकर, पूछा एक प्रश्न का उत्तर।।17।।
वृद्ध वेषधारी का प्रश्न सुन, बोल पड़े आकस्मिक गौतम।।18।।
तू मुझको निज गुरू के पास में, ले चल वहीं पर करूँगा वाद मैं।।19।।
इन्द्र को तो यह इन्तजार था, प्रभु ढिग चलने को तैयार था।।20।।
चले इन्द्र के साथ में गौतम, अपने पाँच शतक शिष्यों संग।।21।।
राजगृही विपुलाचल ऊपर, राज रहा था समवसरण प्रभु।।22।।
वहाँ पहुँचते ही गौतम की, सारी मिथ्याभ्रांति हटी थी।।23।।
तत्क्षण सम्यग्दर्शन पाया, वीर प्रभू को शीश नमाया।।24।।
बन गये नग्न दिगम्बर मुनिवर, तत्क्षण बने प्रभू के गणधर।।25।।
हो गये चार ज्ञान के धारी, जय हे भगवन् स्तुती उचारी।।26।।
वीर की दिव्यध्वनि तत्क्षण ही, खिर गई गणधर के मिलते ही।।27।।
इन्द्रभूति गौतम गणधर ने, दिव्यध्वनि हृदयंगम करके।।28।।
द्वादशांग रच दिया शीघ्र ही, उसका ही है अंश आज भी।।29।।
श्रावण कृष्णा एकम तिथि थी, गणधर पद धारण की शुभ थी।।30।।
महावीर शासन का शुभ दिन, कृतयुग का माना है प्रथम दिन।।31।।
ग्रंथ आज उपलब्ध हैं जो भी, प्रभु वाणी के अंश हैं वो भी।।32।।
है साक्षात भी गौतम वाणी, सुनो भव्यजन जगकल्याणी।।33।।
कहें ''सुदं मे आउस्संतो'', तुम भी धारो आयुष्मन्तों।।34।।
दश अध्यायों में विभक्त है, ज्ञान प्राप्ति हेतू सशक्त है।।35।।
गणिनी ज्ञानमती माताजी, गणधरवाणी संग्रहकर्त्री।।36।।
उनने गणधर वर्ष चलाया, जिन आगम का सार बताया।।37।।
सभी भव्यजन पढ़ो पढ़ाओ, गणधर वाणी को अपनाओ।।38।।
गौतम गणधर पूजन कर लो, नाम मंत्र भी उनका जप लो।।39।।
जय जय बोलो प्रभु पद नम लो, सार्थक मानव जीवन कर लो।।40।।

–शंभु छंद–

यह गौतम गणधर चालीसा, चालिस दिन तक नितप्रति पढ़ना।
हे आयुष्मन्तों ! गणधर की, ऋद्धी का फल सार्थक वरना।।
जीवन में भौतिक एवं आध्यात्मिक सुख की प्राप्ती करना।
फिर परम्परा से गणधर पद को, पाकर शाश्वत सुख भरना।।1।।
गणिनी माता श्री ज्ञानमती, जी की शिष्या चन्दनामती।
श्री गौतमगणधर गणनायक, की स्तुति में यह रची कृती।।
श्री वीर संवत् पच्चीस शतक, आषाढ़ शुक्ल षष्ठी की तिथी।
प्रभु वीर गर्भकल्याणक दिन, गणधर पद अर्पण किया कृती।।2।।
भगवान वीर मंगलमय हों, गौतम गणधर मंगलकारी।
श्री कुन्दकुन्द आचार्य तथा, जिनधर्म सदा मंगलकारी।।
महावीर प्रभू का जिनशासन, जब तक जग में जयशील रहे।
उन शिष्य प्रभू गौतम स्वामी, की वाणी भी जयशील रहे।।3।।

धर्म एक सर्वश्रेष्ठ समुद्र है

चारुगुणसलिलपउरं संजमउत्तुंगउम्मिसंघायं।
णिम्मलतवपायालं समिदि–महामच्छ–संछण्णं।।
जमणियमदीवपउरं वरगुत्तिगंभीर–सीलमज्जादं।
णिव्वाणरयणणिवहं धम्मसमुद्दं णमंसामि।।

अर्थ–सुन्दर गुणोंरूप जल की प्रचुरता से संयुक्त, संयमरूप उन्नत ऊर्मि समूहों से सहित, निर्मल तपरूप पातालों से परिपूर्ण, समितियों रूपी महामत्स्यों से व्याप्त, यम-नियम–रूप प्रचुर द्वीपों (जलजन्तु विशेषों) से संयुक्त, श्रेष्ठ गुप्तियों एवं गंभीर शीलरूप मर्यादा से सहित और निर्वाणरूप रत्नसमूह से सम्पन्न ऐसे धर्मरूप समुद्र को मैं नमस्कार करता हूँ।

–जम्बूद्वीपपण्णत्ति-आचार्य पद्मनंदि

भजन

रचयित्री–प्रज्ञाश्रमणी आर्यिका चंदनामती

तर्ज–जिन्दगी प्यार का गीत है.....

गौतम गणधर की वाणी सुनो,
ज्ञान अमृत के स्वादी बनो।
वीर प्रभु दिव्यध्वनि को सुनो,
अपने आतम में उसको गुनो।।टेक.।।
आज हम सबका यह पुण्य है, पाया धरती पे नर जन्म है।
इसमें जिन भक्ति ही मुख्य है, गुरु की वाणी से शिव सौख्य है।
वीर वाणी का अमृत चखो,
गुरु गौतम के श्रुत को सुनो।। गौतम.।।1।।
आयुष्मन्तों ! सुना मैंने है, ये वचन गणधर स्वामी कहें।
मुनि–श्रावक ये दो धर्म हैं, शक्तिसम इनका पालन करें।।
सुदं मे आउस्संतो सुनो,
श्रुत का चिन्तन करो औ गुनो।।गौतम.।।2।।
गणिनी श्री ज्ञानमती माता ने, गणधर वाणी बताई हमें।
उसको प्रतिदिन पढ़ें हम सभी, ''चंदनामति'' अमर हो कृती।।
वीर प्रभु के चरण में नमो,
गुरु गौतम के भी पद नमो।।गौतम.।।3।।

गीत

रचयित्री–प्रज्ञाश्रमणी आर्यिका चंदनामती

तर्ज–सावन का महीना.....

गौतम गणधर वाणी, है द्वादशांग का सार।
गौतम गणधर वर्ष मनाकर, बोलो जय जयकार।।टेक.।।
वीर प्रभू के शिष्य प्रथम, ये गणधर प्रमुख कहाये हैं।
नग्न दिगम्बर मुनि बनकर, मनपर्यय ज्ञान को पाये हैं।।
प्रभु की दिव्यध्वनि सुन, पा गये निजातम सार।
गौतम गणधर वर्ष मनाकर, बोलो जय जयकार।।1।।
राजगृही नगरी में विपुलाचल पर्वत था धन्य हुआ।
श्रावण कृष्णा एकम को जहाँ समवसरण जिनवर का बना।।
राजा श्रेणिक ने तब, प्रभु भक्ती करी अपार।
गौतम गणधर वर्ष मनाकर, बोलो जय जयकार।।2।।
गणिनी ज्ञानमती माताजी की सबको प्रेरणा मिली।
गणधर वाणी पढ़ने की ''चंदनामती'' देशना मिली।।
इसीलिए यह उत्सव, आया है पहली बार।
गौतम गणधर वर्ष मनाकर बोलो जय जयकार।।3।।

भजन

रचयित्री–प्रज्ञाश्रमणी आर्यिका चंदनामती

तर्ज–जिंदगी प्यार का गीत है.....

जन्म मानव का पाया है जो,
उसे सार्थक तो करना पड़ेगा।
वंश उत्तम ये पाया है जो,
मूल्यांकन तो करना पड़ेगा।।टेक.।।
कई जन्मों का पुण्य खिला, जिससे जिनधर्म उत्तम मिला।
गुरु का उपदेश ऐसा मिला, ज्ञान का दीप मन में जला।।
पाके सम्यक्त्व के रत्न को,
शिव डगर पे तो चलना पड़ेगा।।1।।
शुद्ध भोजन करोगे यदी, बुद्धि अच्छी बनेगी तभी।
छानकर जल पिओगे यदी, वाणी पावन बनेगी तभी।।
मन की शुद्धी के हेतू तुम्हें,
स्वच्छ भोजन तो करना पड़ेगा।।2।।
जाति औ कुल की रक्षा करो, शास्त्र औ गुरु की शिक्षा वरो।
दान-पूजन के योग्य बनो, आगे दीक्षा के योग्य बनो।।
शुद्ध खानदान रखना है यदि,
जाति में ब्याह करना पड़ेगा।।3।।
अपने बच्चों को संस्कार दो, पिण्ड शुद्धी का उपहार दो।
मुक्ति का मार्ग साकार हो, निज व पर का भी उपकार हो।।
''चन्दनामति'' सुनो भाइयों!
तुम्हें कुल शुद्धि रखना पड़ेगा।।4।।